

अंतर स्पंदन

शून्य से पूर्ण तक की यात्रा

राम प्रसाद दाधीच



BlueRoseONE^{.com}
Stories Matter

New Delhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS

India | U.K.

Copyright © Ram Prasad Dadhich 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



BlueRoseONE[®]
Stories Matter
New Delhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-81-69822-91-6

Cover Design: Deepak Katheria
Typesetting: Manisha Rawat

First Edition: October 2026

जय गुरुदेव!

यह पुस्तक परम पूज्य गुरुदेव श्री श्री रवि शंकर जी के श्री चरणों में सादर समर्पित है।

मैं कृतज्ञ और धन्यभागी हूँ कि आपके कृपा-प्रसाद से यह कार्य पूर्ण हो पाया।

दिनांक: 20 अक्टूबर 2026, विजयादशमी, मंगलवार



परम् पूज्य गुरुदेव
श्री श्री रविशंकर जी महाराज 🙏

गुरुब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः॥५

गुरुब्रह्मा - गुरु ही ब्रह्मा हैं।

गुरुर्विष्णुः - गुरु ही विष्णु हैं।

गुरुर्देवो महेश्वरः - गुरु ही महेश्वर हैं।

गुरुः साक्षात् परब्रह्म - गुरु ही साक्षात् सर्वोच्च ईश्वर हैं।

तस्मै श्रीगुरुवे नमः - ऐसे महान और ज्ञान देने वाले सद्गुरु को मेरा बारम्बार प्रणाम है।

मेरे भावः गुरु एक आश्रय है। एक ठिकाना है। गुरु मेरा असली पता है। इसे ऐसे समझो, जैसे एक विराट वृक्ष खड़ा है। उसका तना मोटा, गहराई तक धरती में धँसा हुआ है। उसकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि पाताल छू रही हैं। उसकी हर डाल हरी-भरी, फूलों से लदी, फलों से झुकी हुई है। उसकी छाँव में पशु विश्राम कर रहे हैं। उसकी डालों पर पक्षी बसेरा लिए हुए हैं। उसके फूलों पर तितलियाँ मँडरा रही हैं। चींटी से लेकर चूहे तक, सबने उसके मोटे तने में अपना घर बना रखा है और सभी बड़े चाव से उसके फल खाते हैं, फूलों का रस चूसते हैं, पत्तियों को चबाते हैं।

क्या उस वृक्ष को कोई शिकायत है?

कदापि नहीं है। न कोई गिला, न कोई शिकवा है। उसके ऊपर कौन बैठा है, उसके फल कौन खा रहा है, फूल कौन सूँघ रहा है, इन सबकी उसे कोई परवाह या चिंता नहीं है। उसे न दर्द है, न दंभ है। उसके मन में कभी यह भाव ही नहीं आता कि 'मैं दे रहा हूँ', बल्कि देने में ही वह खिल उठता है। फल-फूल-छाया लुटाकर वह आनंद से भर जाता है।

अब रहस्य समझो -

जो उस वृक्ष का आश्रय लेता है, वही जानता है कि यही मेरा सबकुछ है।

वह समर्पण कर देता है। कृतज्ञ हो उठता है। शुकराना करता है। जैसे ही वह खाली होता है, जैसे ही मानता है कि 'यह मेरा है भी' और 'मेरा नहीं भी है', वैसे ही उसे और मिलता चला जाता है। वह उस वृक्ष में समा जाता है। वृक्ष उसका सर्वस्व बन जाता है।

फिर उस पर कोई आँच नहीं आती है। वृक्ष स्वयं उसकी ढाल बन जाता है।

मेरे प्यारे दोस्तों! मेरे भाइयों! मेरे पाठकों! मेरे गुरुदेव श्री श्री भी वही वृक्ष हैं, जो सबकुछ देते हैं और हँसते-हँसते देते हैं। वे न माँगते हैं, न जताते हैं। पर एक छोटी सी शर्त है। शर्त यह कि गुरु से पाने के लिए, पहले गुरु में समाना पड़ता है। गुरु को ही उसे अपना आश्रय बनाना पड़ता है। उस वृक्ष की तरह निःस्वार्थ होकर सेवा करनी पड़ती है। जिस क्षण तुम समा गए, उस क्षण से तुम्हें सोचना नहीं पड़ता है कि 'मैं क्या करूँ, मेरा क्या होगा' क्योंकि गुरु स्वयं तुम्हारा रास्ता बन जाता है, गुरु स्वयं तुम्हारा आश्रय बन जाता है। तुम्हारी चिंता अब तुम्हारी नहीं रहती है, गुरु तुम्हारी चिंता करता है। फिर एक दिन तुम चौंककर देखोगे कि हर काम अनायास हो रहा है - बिना प्रयास के, बिना बोझ के हो रहा है।

यही है गुरु-कृपा। यही है गुरु-ग्रेस।

गुरु सोलह कला का स्वामी है। उसके सामने 'इच्छा' का जन्म लेना ही 'प्राप्ति' बन जाता है क्योंकि गुरु माँगने पर नहीं, मिटने पर मिलता है।

तो मिट जाओ। समा जाओ और देखो — पूर्ण गुरुदेव तुम्हारे द्वार पर खड़ा है।

इस तरह की महिमा वाले मेरे सर्वस्व गुरुदेव श्री श्री रविशंकर जी को कोटि-कोटि सादर प्रणाम एवं चरण वंदन! अभिनंदन! 🙏

जय गुरुदेव!

प्रस्तावना



यह पुस्तक कोई साधारण पुस्तक नहीं, एक पुकार है। यह शब्दों का संग्रह नहीं - यह एक यात्रा है — बाहर से भीतर की ओर, शोर से मौन की ओर, "मैं" से "शून्य" की ओर - यह अन्तर्-स्पंदन है। तुम्हारे भीतर सोए हुए सत्य की धड़कन है।

हम जीवन भर बुद्धि के सहारे जीते हैं। क्या पढ़ना है, क्या छोड़ना है, क्या सही है, क्या गलत है — हर निर्णय बुद्धि की तराजू पर तौलते हैं। इसलिए हर पुस्तक के आरंभ में विषय-सूची होती है, ताकि तुम चुन सको, ताकि तुम्हारी बुद्धि को सुविधा हो।

पर इस पुस्तक में जानबूझकर कोई विषय-सूची नहीं है, क्योंकि बुद्धि ही वह दीवार है जो तुम्हें तुम्हारे वास्तविक स्वभाव से, तुम्हारी आत्मा से अलग करती है। बुद्धि विश्लेषण करती है, तोड़ती है, तुलना करती है। और जहाँ तुलना है, वहाँ प्रेम नहीं। जहाँ तोड़ना है, वहाँ पूर्ण नहीं।

उपनिषद् कहते हैं — यह संसार अनित्य है, क्षणभंगुर है। शरीर नदी की तरह बह रहा है, मन हवा की तरह डोल रहा है, भावना लहर की तरह उठती-गिरती है। फिर भी हम नित्य को पकड़ना चाहते हैं। सुख को, शांति को, प्रेम को बाँध लेना चाहते हैं। यही अशांति की जड़ है।

इस पुस्तक का एक ही आग्रह है: *बुद्धि को एक किनारे रख दो, और होश के साथ पढ़ोगे, तब यह पुस्तक आपके अन्तर् मन एवं हृदय को स्पंदित कर देगी, यही प्रकृति है।

यहाँ ध्यान है, पर केवल आँख मूँदकर बैठना नहीं। यहाँ होश है, पर केवल सतर्कता नहीं। यहाँ आत्म-साक्षात्कार है, पर वह किसी हिमालय की गुफा में नहीं, तुम्हारे रोज़ के व्यावहारिक जीवन में है। सुबह की चाय पीते हुए, बाज़ार में सौदा करते हुए, बच्चों को हँसाते हुए, थके हुए पाँवों से घर लौटते हुए — हर क्षण में ध्यान कैसे जिँएँ, हर साँस में होश कैसे साथे, यही इस पुस्तक का मर्म है।

यह पुस्तक ब्रह्म की बात करती है, पर उसे आकाश में नहीं खोजती। वह कहती है — प्रकृति ही ब्रह्म है। पेड़, नदी, मिट्टी, तुम्हारी धड़कन, तुम्हारी मुस्कुराहट — सब उसी विराट स्वरूप का अंश है। जब तुम प्रकृति से कटते हो, तो इंद्रियाँ भटकती हैं, मन दौड़ता है, भावना में ज़हर घुलता है और बुद्धि विध्वंस का हिसाब लगाने लगती है। और जब प्रकृति से जुड़ते हो, तो सेवा जन्म लेती है, प्रेम फूटता है, भक्ति बहती है, मौन गूँजता है।

यहाँ दृष्टि की बात है, जो सृष्टि को देखना सिखाती है। यहाँ शून्य की बात है, जिसमें पूर्ण उतरता है। यहाँ गुरु है, पर वह बाहर नहीं — तुम्हारा होश ही गुरु है। यहाँ आनंद है, पर वह बाज़ार में बिकने वाला नहीं, वह आनंद का फ़व्वारा है जो भीतर से फूटता है जब "मैं" मिट जाता है।

आसन लगाना ही योग नहीं है, होश और ध्यान के साथ जीवन जीना ही योग है। प्रकृति के साथ संतुलन साधना, वसुधैव कुटुंबकम् को जीना, हर कर्म को साधना बना देना — यही असली योग है।

इसलिए इस पुस्तक को क्रम से पढ़ने की ज़रूरत नहीं। इसे चुन-चुन कर पढ़ने की ज़रूरत नहीं। इसे बस प्यास लेकर पढ़ो। जहाँ से खोलोगे, वहीं से गंगाजल बह निकलेगा। क्योंकि यहाँ शब्दों से ज़्यादा मौन है, विचारों से ज़्यादा भावना है, बुद्धि से ज़्यादा आत्मा है।

यदि तुम तैयार हो अपनी बुद्धि का तरकश एक तरफ रखने को, यदि तैयार हो एक बच्चे की तरह भयमुक्त होकर, होश से भरकर, मुस्कुराहट के साथ इस यात्रा पर निकलने को — तो आओ।

इस पुस्तक का अधिकांश हिस्सा तब जन्मा, जब पूरी सृष्टि करवट बदल रही थी — कोरोना काल में, जब बाहर मृत्यु नाच रही थी, तब भीतर जीवन जाग रहा था।

हम जब प्रकृति से जुड़ते हैं तो सेवा जन्म लेती है, प्रेम फूटता है, भक्ति बहती है, मौन गूँजता है। इस पुस्तक के मुख्य पृष्ठ पर यही मौन बोलता है। इसे मेरी पुत्र-वधु श्रीमती साक्षी-शेखर दाधीच ने कैनवास पर उतारा है। अब देखो तो सही — राधा-कृष्ण "ॐ" में समाए हुए हैं। यह चित्र नहीं है, एक सूत्र है कि प्रेम जब बुद्धि की सीमा लाँघ जाए, तो वही योग हो जाता है। जब मिटकर एक में समा जाएँ, तो वही "ॐ" है, वही ब्रह्म है। यहाँ दृष्टि की बात है, जो सृष्टि को देखना सिखाती है...

लेखक का आर्ट ऑफ़ लिविंग के साथ वर्षों के मौन अनुभव, साधना, योग, ध्यान, श्रवण, मनन और निधिध्यासन से जो अमृत निचुड़ा — वही तुम्हारी हथेली पर रख दिया है।

जय गुरुदेव!

जो दिखाई देता है, वह दृश्य है- जिसके द्वारा देखा जाता है, वह दृष्टि है- और जो देखने वाला है, वह द्रष्टा है।

साधना यही है - दृश्य से दृष्टि पर आना, और दृष्टि से द्रष्टा में ठहर जाना।

जब दृष्टि बिना किसी दृश्य के, बिना किसी प्रयत्न के, अपने आप स्थिर हो जाए- जब प्राण बिना प्रयास के रुक जाए, और मन बिना सहारे के ठहर जाए-तब समझो जीव आत्मा में स्थित हो गया है।

इस प्रकार चेतन अवस्था की थोड़ी सी भी यात्रा, जीवन में जीवन-मुक्ति का चमत्कार घटा देती है।

दृश्य से दृष्टि, दृष्टि से द्रष्टा।

द्रष्टा में ठहरना ही ध्यान है।

जहाँ प्रयास के बिना प्राण और मन ठहर जाएँ, वहीं आत्मा का द्वार खुलता है। 🙏❤️

जय गुरुदेव! ❤️

मिट्टी का घड़ा बोला कि मैं घड़ा हूँ। मिट्टी का कुल्हड़ बोला कि मैं कुल्हड़ हूँ। मिट्टी का गमला बोला कि मैं गमला हूँ। मिट्टी से बना मकान बोला कि मैं मकान हूँ। अब मिट्टी क्या बोले? कारण? उसका तो कोई नाम भी नहीं है। पर नाम बिना किसी का कोई अस्तित्व नहीं होता है। तब मिट्टी बोली - मैं कुछ भी नहीं हूँ।

अब समझना है कि मैं शरीर हूँ, मैं मन हूँ, मैं बुद्धि हूँ, मैं राम हूँ, मैं डॉक्टर हूँ, मैं वकील हूँ इत्यादि !

आत्म-साक्षात्कार के लिए सबसे पहले स्वयं को मिट्टी होना पड़ता है कि मैं देह नहीं, मैं मन नहीं, मैं नाम नहीं, मैं बुद्धि नहीं, मैं कुछ भी नहीं हूँ। जब तक मिट्टी नहीं बनते हैं, तब तक सबकुछ नहीं बन सकते हैं।

भगवान् ने गीता में कहा है कि 'मैं ही सबकुछ हूँ'। इसके पीछे यही सार है।

वेदांत का ज्ञान भी यही है - "तत्त्वमसि, "या "अहम् ब्रह्मास्मी"। सद्ग्रंथों में सीधे शब्दों में कहा है कि 'मैं ही सबकुछ हूँ', मुझसे ही सबकुछ बना है, यानि तुम भी वही हो, जो भगवान् स्वयं है। तब तो मिट्टी भी कह सकती है कि मैं ही सबकुछ हूँ, लेकिन उसने कहा कि मैं कुछ नहीं हूँ। क्यों? क्योंकि सबकुछ बनने के लिए पहले 'मैं कुछ नहीं हूँ' बनना पड़ेगा, तभी तुम सबकुछ बन सकते हो। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव* 

प्रकाश की तरफ़ अगर पीठ है तो छाया दिखेगी-प्रकाश की ओर मुख है तो प्रकाश ही दिखेगा।

इसको समझना होगा: छाया का दृष्टिगत होना- हमारी चिंता, हमारा डर, हमारे मनचाहे नतीजे होना - ये सब छाया हैं। छाया की एक खासियत है - वो कभी खत्म नहीं होती है- उसके साथ लड़ने से बड़ी होती है- उससे भागने से पीछा करती है। क्योंकि छाया का होना प्रकाश का अभाव है। प्रकाश द्रष्टा है। गुरु है। आत्मा है।

जब तक प्रकाश की तरफ़ पीठ रहेगी-छाया हमारा पीछा करती रहेगी- यानि संसार की तरफ़ हमारा मुख है तब तक छाया हमारे साथ रहेगी- जैसे ही हम गुरुमुखी होते हैं- प्रकाश की तरफ़ मुड़ जाते हैं- छाया खुद ही गायब हो जाती है। गुरुमुखी का अर्थ है - *अपना मुख उस ओर कर लेना जहाँ से प्रकाश आ रहा है। जब मन शिकायत में जाए - तब मुड़ जाओ, धन्यवाद में आ जाओ। जब मन दृश्य में उलझे - तब मुड़ जाओ, दृष्टि पर आ जाओ।

जब लगे "मैं गया" - तब मुड़ जाओ, द्रष्टा में आ जाओ।

जय गुरुदेव!

मन क्या है?

मन विचारों की एक लहर है-जैसे विशाल समुद्र में लहरें उठती हैं, वैसे ही विशाल चेतना में विचार उठते हैं। इसीलिए यह वास्तविक जैसा लगता है, पर इसका स्वरूप शून्य होता है - जैसे साफ आकाश में प्रतिबिंब दिखाई देता है।

कोई भी विचार आपकी आदतों और पकड़ के कारण उठता है-ये विचार और कुछ नहीं, सिर्फ अतीत की छापें और अज्ञात की कल्पनाएँ होती हैं। विचारों को रोकने का प्रयास कभी नहीं करना चाहिए।

बस उस मन को पहचानो, जिसमें विचार उठते हैं और स्वयं ही शांत हो जाते हैं।

वास्तव में मन का स्वभाव ही है - निरंतर विचार उत्पन्न करना, चंचल रहना और अतीत व भविष्य में भटकना।

जब तुम विचारों को रोकते नहीं हो-बस देखते जाते हो, तभी अचानक वह पल आता है कि तुम अपने स्व-स्वभाव में लौट जाते हो और प्राकृतिक सौंदर्य से सराबोर हो जाते हो -और बिना वजह के तुम्हारे चेहरे पर मुस्कान उतर जाती है।

यह अनादि अनंता की ही व्याख्या है। ❤️🙏

जय गुरुदेव!

प्रकृति और चेतना का अद्वैत रूप का दर्शन!

नर्मदा उफान पर थी। प्रलय जैसा दृश्य। एक माँ दौड़ती हुई आदि शंकराचार्य के पास आई — "भगवान, मेरी बेटी उस पार फँसी हुई है, उसे बचा लो"। आचार्य शांत भाव में थे, आँखों में करुणा थी, हृदय में शांति, मन में कोई हलचल नहीं थी। उन्होंने अपने कमंडल से दो बूँद जल नर्मदा में डालते हुए केवल इतना कहा — "बहो, पर उल्टा बहो"।

तभी नदी पलटी और रास्ता बना दिया। माँ ने बेटी के पास जाकर उसे गले लगा लिया।

सारे शिष्य चकित थे। उन्होंने पूछा— "गुरुदेव, यह कैसे संभव हुआ?"

शंकराचार्य मुस्कराते हुए बोले — "प्रकृति और चेतना दो नहीं हैं। जब तुम संपूर्ण मौन, संपूर्ण करुणा, संपूर्ण बोध से प्रकृति को पुकारते हो, तब वह सिर्फ तुम्हारी ही आज्ञा मानती है क्योंकि तुम स्वयं चेतना के एक शक्तिपुंज हो। प्रकृति तुम्हारी दासी है, तुम्हारी प्रतिछवि है। इसको तुम चमत्कार कहो या अद्वैत, बात एक ही है। नदी बाहर नहीं, तुम्हारे भीतर भी बहती है। जब चेतना निर्मल हो, संकल्प शुद्ध हो, करुणा गहरी हो, तब प्रकृति भी उल्टा बह जाती है क्योंकि प्रकृति और कुछ नहीं, तुम्हारी ही चेतना का विस्तार है। जिस क्षण तुम जान लो कि तुम द्रष्टा हो, कर्ता नहीं — उसी क्षण प्रकृति तुम्हारे साथ बहती है, तुम्हारे लिए बहती है। 🙏❤️❤️"

जय गुरुदेव!

उपनिषद् कहते हैं - "आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति", अर्थात् - सबकुछ आत्मा के प्रेम के लिए ही प्रिय होता है। जैसे - कोई पत्नी को पत्नी के लिए नहीं चाहता, पत्नी के माध्यम से वह अपने आपको ही प्रेम करता है; कोई पुत्र को पुत्र के लिए नहीं चाहता, पुत्र के माध्यम से अपने आपको ही प्रेम करता है; कोई बगीचे को बगीचे के लिए नहीं चाहता, उसके माध्यम से अपने आपको ही प्रेम करता है।

इसका पहला रहस्य - हमारी आत्मा का स्वभाव 'प्रेम' होने से वह प्रेम में डूबकर ही तृप्त होती है। जो बाहर दिखाई देता है, वह भीतर के प्रेम का ही प्रतिबिंब है।

दूसरा रहस्य - प्रेम का स्वभाव है कि जो जैसा है, उसे वैसा ही स्वीकार कर लेना होता है। प्रेम, घृणा, क्रोध, द्वेष में अस्वीकार तब आता है, जब बीच में बुद्धि आ जाती है। जैसे ही हम बुद्धि से तौलने लगते हैं, जैसे ही अच्छा-बुरा, मेरा-तेरा करते हैं, वैसे ही प्रेम और आनंद छूट जाते हैं क्योंकि आत्मा तो बुद्धि से परे है और ईश्वर भी बुद्धि से परे है।

बुद्धि विश्लेषण करती है, प्रेम स्वीकार करता है। बुद्धि तोड़ती है, प्रेम जोड़ता है। इसलिए सूत्र सरल है - जो जैसा है, उसे वैसा स्वीकार करो। तर्क छोड़ो, तो प्रेम बचेगा। बुद्धि छोड़ो, तो आत्मा मिलेगी। और आत्मा मिलते ही सब अपना हो जाता है क्योंकि सबमें वही एक है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

सूक्ष्म - स्थूल को नियंत्रित करता है - यही सत्य विज्ञान है।

भगवद्गीता में यही है, भौतिक शास्त्र में भी यही है कि सबसे छोटे कण ही पदार्थ को बनाते हैं। इसी प्रकार हमारा मन ही शरीर को बनाता है, लेकिन यहाँ आकर दो रास्ते खुलते हैं।

पहला रास्ता - सिद्धि का रास्ता- “अगर सूक्ष्म से स्थूल बनता है, तो मैं सूक्ष्म को पकड़ कर स्थूल में रहकर मनचाहा वरदान पा लूँ जैसे: पैसा, नाम, रिश्ते, स्वास्थ्य आदि सब मन से प्रकट कर लूँ।

दूसरा रास्ता - मुक्ति का रास्ता है-“अगर सूक्ष्म ही स्थूल को बना रहा है, तो यह दोनों ही माया हैं। मुझे न सूक्ष्म चाहिए, न स्थूल। मुझे तो उसको जानना है जो दोनों को देख रहा है और बना रहा है।

फल प्राप्ति के लिए आपने- सूक्ष्म को अगर नियंत्रित किया तो आप फिर से -दृश्य में फँस गए। अगर आप दृश्य से दृष्टि पर आए- फिर दृष्टि से द्रष्टा पर गए- उसके बाद अगर द्रष्टा की शक्ति से दृश्य को सुधारने लग गए तो आप घूम कर वहीं आ गए जहाँ से चले थे।

आपका मकसद दृश्य को सुधारना नहीं है- बल्कि यह समझना है कि दृश्य है ही नहीं।” विवेक पूर्णता यह है कि जो सूक्ष्म को नियंत्रित करने की कोशिश नहीं करते- वो सूक्ष्म को भी छोड़ देते हैं -और छोड़ते ही - एक आश्चर्य होता है -स्थूल अपने आप सुधरने लगता है। 🙏❤

जय गुरुदेव!

शिष्य ने पूछा सच्चा - वैराग्य क्या है? यह सुनकर गुरुजी ने शिष्य को मिठाई से भरा कटोरा देकर कहा कि इसे खाओ और अच्छी तरह हाथ धोकर आना। शिष्य ने साबुन से हाथ धोया जिससे चिपका हुआ घी और चाशनी उतर गई। गुरुजी ने कहा कि अब जीभ को भी धोकर आओ, यह सुनकर शिष्य हँसा और बोला - “गुरुजी! जीभ पर चिपका हुआ घी और मीठा तो स्वाद के साथ पेट के अंदर चला जाएगा, उसे धोने की कोई ज़रूरत नहीं है”। गुरुजी मुस्कराए और बोले - “मेरे बच्चे! वैराग्य होना यही है। जीभ ने स्वाद का आनंद लिया, फिर उसे जाने दिया और हाथ ने उसे पकड़ लिया और उसको साफ़ करने की आवश्यकता महसूस हुई है”।

वैराग्य का अर्थ जीवन के आनंद को अस्वीकार करना नहीं है, इसका अर्थ है पूरी तरह से उपस्थित रहते हुए स्वाद एवं आनंद लेना। क्यों? क्योंकि जब हम सफलता, दर्द या लोगों को पकड़ लेते हैं, तब वह मन पर अवशेष छोड़ देता है और जितना अधिक हम चिपके रहते हैं, उतना ही अधिक शुद्ध होने की, मौन होने की तथा चिंतन और आंतरिक जागरुकता की आवश्यकता होती है। हम पूरी तरह से जियें, गहराई से स्वयं को प्यार करें लेकिन मुक्त रहें, यही सच्चा वैराग्य है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

प्रतिस्पर्धा हमेशा अपने स्वभाव से वंचित कर देती है। परमात्मा ने तुम्हें स्वयं के स्वभाव में जीने के लिए जीवन दिया है, तभी शांति उपलब्ध हो सकती है। अपने स्वभाव में जियो, महत्वाकांक्षा छोड़ दो, दूसरे का अनुकरण मत करो।

एक ज्ञानी ने सभा की अंतिम पंक्ति में बैठने का यह कारण बताया कि वहाँ बैठने पर किसी और के द्वारा उसे परेशान किया और भगाया नहीं जाएगा। कारण? उसके पीछे दूसरा कोई भी नहीं था। उसने कहा कि प्रथम पंक्ति में बैठने वालों की हमने बहुत बार फ़ज़ीहत होते देखी है। सभा के मँच पर बैठने वाला हर आदमी पीछे की सारी पंक्तियों को पार करके मँच पर बैठा हुआ है। प्रथम पंक्ति में बैठे हुए लोग ही मँच वालों को पदच्युत करने में लग जाते हैं क्योंकि उनको उतारकर मँच पर बैठना है।

पीछे की लाइन में बैठे हुए लोग सुरक्षित हैं क्योंकि उनमें प्रतिस्पर्धा की भावना नहीं है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

*नकारात्मकता बिना आधार के ज़िंदा नहीं रह सकती है, उसे कोई-न-कोई सहारा चाहिए होता है, लेकिन सकारात्मकता अकारण होती है। कारण? उसका स्वभाव आनंद और प्रेम होता है और वह अपने आप में पूर्ण हैं।

मन का स्वभाव है कि वह अपनी उदासी, अपने क्रोध, अपनी शिकायत के लिए कोई-न-कोई खूंटी खोजता रहता है। मन नकारात्मकता को अकेला नहीं छोड़ता, उसे हमेशा किसी कंधे की ज़रूरत पड़ती है।

सकारात्मकता यानि खुशी को किसी बहाने की ज़रूरत नहीं है, वह सुबह की धूप की तरह होती है। बच्चे की हँसी की तरह वह अकारण खिलती है। यही माया का जाल है।

जिस दिन तुम नकारात्मकता को सहारा देना बंद करो, उसी दिन वह भूखी मर जाती है और जो अकारण आनंद है, वह तुम्हारा स्वभाव है, उसे पाना नहीं है, बस पहचानना है। नकारात्मकता परजीवी है, सकारात्मकता स्वयंभू है। एक को भोजन चाहिए, दूसरा स्वयं ही भोजन है। ❤️💛🙏

जय गुरुदेव!

उपनिषद् कहते हैं - "तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तुः"। अर्थात्, यह प्रार्थना शरीर के लिए नहीं है, धन के लिए नहीं है, यह तो मन के लिए है कि मेरा मन शुभ संकल्पों वाला एवं कल्याणकारी विचारों से परिपूर्ण हो।

ऋषि कहते हैं कि जगत का मूल मन ही है, जैसा मन वैसा जीवन होता है। मेरा मन अशुभ, नकारात्मक, द्वेष-क्रोध के विचारों से मुक्त हो। उसमें केवल प्रेम, करुणा, क्षमा, सत्य के संकल्प उठें। मेरे विचार केवल मेरे लिए नहीं, सबके कल्याण के लिए हों। मेरा मन ऐसा हो कि उसके सोचने मात्र से जगत का भला हो। मेरा मन स्वयं शिव-स्वरूप हो जाए। मन शुभ हो गया, तो जगत् अपने आप शुभ दिखेगा। हे प्रभु! मेरा मन शिव-संकल्प वाला हो तथा कर्म भी शिव समान हो, तब उसका परिणाम भी शिव ही होगा।

यह मंत्र, जाप के लिए नहीं है। इस मंत्र में प्रेम और श्रद्धापूर्वक मन को ठहराया गया है और मन को शिव-संकल्प में स्थित होना है। इससे मन विलीन होकर 'शिव' बन जाता है। 

जय गुरुदेव! ❤️

एक बात समझने योग्य है कि जिस तरह अग्नि सब जगह व्याप्त होते हुए भी दिखाई नहीं देती है, ब्रह्म भी ऐसे ही है कि वह सभी जगह व्याप्त है पर दिखाई नहीं देता है।

किसी वस्तु को जलाओगे, तो अग्नि रूप में दिखाई देती है लेकिन अरूप में अग्नि सभी जगह व्याप्त है। जैसे - लकड़ी में अग्नि होती है लेकिन उसका रूप छिपा हुआ होता है, कपड़े में अग्नि होती है लेकिन उसका रूप छिपा हुआ है और इनको जलाते ही अग्नि अपने रूप में दिखाई देने लग जाती है। 'ब्रह्म' भी ऐसे ही है कि वह सभी जगह व्याप्त है - "सर्वं खल्विदं ब्रह्म (सबकुछ वास्तव में ब्रह्म ही है)"। उसे देखने की दृष्टि यह है कि हम प्रकृति में हर व्यक्ति, वस्तु, और परिस्थिति में प्रेम-स्वरूप को देखें। तभी प्रकृति में सबकुछ एक समान दिखाई देता है क्योंकि सच्चिदानंद ही 'ब्रह्म' है। वस्तुतः, यही ज्ञान है, यही सत्य है, यही शाश्वत् है। वह सभी की आत्मा में एक ही रूप में विराजमान है, इसलिए इसको देखने के लिए साधना और गुरु की आवश्यकता होती है, जो हमें आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाते हैं। यह ज्ञान वेद और उपनिषद् का सारांश है, जो हमें अपने असली स्वरूप को जानने की दिशा में प्रेरित करता है और हमारे जीवन को एक नए अर्थ और उद्देश्य से भर देता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

वेदांत कहता है कि देश और काल सापेक्ष एवं आश्रित हैं। ये दोनों आपस में एक-दूसरे पर निर्भर हैं। इनका अलग-अलग अस्तित्व नहीं है। देश और काल दोनों माया हैं और माया के प्रभाव में ये बदलते रहते हैं। जैसे - मैं दिल्ली से जयपुर पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही भौगोलिक स्थिति में परिवर्तन हो गया लेकिन ब्रह्मांड दोनों जगह का एक ही है। जयपुर से दिल्ली पहुँचने में घड़ी का समय बदला है लेकिन वस्तुतः 'मैं' तो समय के साथ ही चल रहा था, इसका मतलब कि समय भी नहीं बदला है। जयपुर पहुँचने के उपरांत भी दिल और दिमाग में दिल्ली बसी है। इसका मतलब कि मेरी आत्मा भी वही है, उसमें भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

यह जो बदला हुआ महसूस होता है और बदलता कुछ भी नहीं है, यही 'माया' है। माया वह शक्ति है जो वास्तविकता को भ्रम में बदल देती है, यह हमें देश-काल के अनुभव में फँसा देती है और हमें अपने असली स्वरूप को भूलने देती है।

एकमात्र 'आत्मा' और 'ब्रह्म' ही सत्य है। देश और काल को माया के प्रभाव में आश्रित माना जाता है। यह आत्म-साक्षात्कार के पथ पर बाधा है। इस अज्ञान से मुक्त होकर ही हम 'ब्रह्म' और 'सत्य' को जान पाते हैं।



जय गुरुदेव!

हमारे शरीर में आकाश-तत्त्व महत्त्वपूर्ण है। आकाश में ही वायु-तत्त्व समाहित होता है। आकाश में ही सूर्य यानि अग्नि-तत्त्व भी समाहित होता है। आकाश में ही जल-तत्त्व भी समाहित होता है। पृथ्वी भी आकाश-तत्त्व के साथ गुरुत्वाकर्षण शक्ति से थमी हुई है।

हमारे शरीर में जो हमें भरा हुआ नज़र आता है या लगता है, वास्तव में वह भरा हुआ नहीं है। यह हमारा शरीर खोखला और खाली है। यह खाली जगह आकाश-तत्त्व ही है। यह जानने-समझने के लिए बुद्धि द्वारा ज्ञान अर्जित करना होगा और विवेक द्वारा ज्ञान को जीवन में उतारना होगा, तभी सत्य का बोध होता है। गुरु कृपा से यह संभव हो सकता है। कारण? गुरु भी आकाश-तत्त्व होता है। गुरु कृपा से जीवन में विवेक उतरता है।

भगवान कृष्ण द्वारा गुरु के रूप में अर्जुन को विराट स्वरूप दिखाने पर अर्जुन में विवेक और ज्ञान जागृत हुआ। इसमें श्रद्धा और भक्ति की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। राधा ने श्रद्धा और भक्ति से कृष्ण को प्राप्त किया और रुक्मिणी ने विवेक और बुद्धि से कृष्ण को प्राप्त किया। अंतर यही है कि राधा का प्रेम आध्यात्मिक है और रुक्मिणी का प्रेम धैर्यपूर्ण है। जीवन में बुद्धि, विवेक, श्रद्धा, भक्ति का संतुलन बनाए रखने से सब संभव है।



जय गुरुदेव!

नदी के साथ पानी होने के उपरांत भी वह भारमुक्त होकर चलती है क्योंकि वह कभी भी शिकायत नहीं करती है कि उबड़-खाबड़ रास्तों पर, जंगलों के रास्तों पर चलने से मुझे परेशानी होती है। नदी प्रयासरहित होकर चलने में अपने जीवन का आनंद लेती है। समुद्र के साथ मिलन पर भी अपने को प्रयासरहित होकर छोड़ देती है, कि अब मैं तुम्हारी हो गई हूँ। तब उसका निर्माता के साथ साक्षात्कार हो जाता है।

आप प्रयासरहित होकर आराम से बैठ जाँ और अपने शरीर को छोड़ दें, अपने विचारों को छोड़ दें, अपनी साँसों को छोड़ दें, अपने होने को छोड़ दें। नदी की तरह बहते जायें; जिधर ले जा रही, चलते जायें, टकराव नहीं करें।

मैं आपको विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि एक दिन आपका समुद्र बाहें फैलाकर स्वागत करेगा और आपका निर्माता प्रकृति के साथ साक्षात्कार हो जाएगा जिससे आपका जीवन सम्पूर्ण आनंद से भर जाएगा, आप ऊर्जा से भर उठेंगे और आपको आत्म-दर्शन हो जाएगा। ❤️🙏

जय गुरुदेव!

भगवान कहते हैं - मेरी रचना में कोई त्रुटि नहीं है, मैंने उसमें सब पूर्ण बनाया है। तब एक कुबड़ा व्यक्ति पूछता है - "तो मैं कैसे बना हूँ? भगवान मुस्कुराकर कहते हैं - "मैं भी पूर्ण नहीं हूँ क्योंकि पूर्णता में प्रश्न नहीं होता। जहाँ प्रश्न है, वहाँ अधूरापन है। जहाँ अधूरापन है, वहाँ जीवन है।

प्रश्न उठते ही वह व्यक्ति पूरी तरह कुबड़ा हो गया, मतलब - शरीर से नहीं, मन से कुबड़ा हो गया। सच तो यह है कि भगवान की रचना में न कूबड़ है, न सुंदरता। ये सब मन के बनाए लेबल हैं और वही अधूरापन तुम्हारा असली कूबड़ बन जाता है।

भगवान ने सारी सृष्टि को पूर्ण बनाया है। पहाड़ ऊँचा है, नदी नीची है - पर दोनों अपनी जगह पूर्ण हैं। फूल सुंदर है, काँटा तीखा है - पर दोनों अपनी जगह जरूरी हैं। अधूरापन ऐसा सोचने से आता है कि 'मैं ऐसा नहीं हूँ, मुझे ऐसा होना चाहिए'।"

जब तुम यह स्वीकार कर लेते हो कि 'जो मैं हूँ, वही पूर्ण हूँ', तो शरीर और मन का कूबड़ गिर जाता है। त्रुटि करना सृष्टि का काम नहीं है, त्रुटि केवल उस नज़र में है जो तुलना करती है। ❤️💛😊

जय गुरुदेव!

सोना तब तक सोना रहता है, जब तक वह खाली है, उसका कोई नाम नहीं है, उसका कोई रूप नहीं है, उसका कोई आकार नहीं है और वह निराकार है। इस अवस्था में वह शुद्ध सोना, अभिमान रहित एवं ब्रह्म-स्वभाव का रहता है। सुनार की चोट और आग लगते ही कंगन, हार, मुकुट का नाम आया, रूप आया और नाम-रूप के साथ अभिमान भी आ गया।

अब सोना कहता है - "मैं कंगन हूँ, मैं कीमती हूँ, मैं विशेष हूँ"। ऐसा होते ही खालीपन मिट गया और निराकार स्वरूप आकार में बंध गया है। यही जीव की कथा होती है। आत्मा और अहंकार का खेल शुरू होता है।

आत्मा भी शुद्ध सोना है - "अहं ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूँ)"।

न जन्म, न मृत्यु, न गुण, न दोष, सिर्फ चैतन्य हूँ, पर माया रूपी सुनार ने आत्मा पर नाम-रूप के आभूषण चढ़ा दिए जिससे मैं शरीर हूँ, मैं डॉक्टर हूँ, मैं वकील हूँ, मैं हिन्दू हूँ, मुसलमान हूँ।

हर आभूषण के साथ एक परत चढ़ गई और खालीपन चला गया। जहाँ खालीपन गया, वहाँ ईश्वर से दूरी हो गई है। इसको समझना ही 'विवेक' है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

एक धनी आदमी का मैनेजर एक भिखारी को हर महीने 50 रुपये देता था। किसी कारणवश उसने एक महीने में 25 रूपए दे दिए। रुपये मिलते ही भिखारी ने पूछा आज मुझे रुपये कम क्यों मिले हैं? मैनेजर बोला कि मालिक की लड़की की शादी है। ऐसा सुनते ही भिखारी बोला कि आपका मालिक हमारे पैसे से ही अपनी लड़की की शादी करेगा क्या?

भिखारी ने अपना हक समझ लिया कि महीने में मुझे 50 रुपये जरूर मिलेंगे और रुपये मिलने पर भिखारी कभी भी मालिक के प्रति धन्यवाद और कृतज्ञ नहीं हुआ। और तो और, उम्मीद से कम रुपये मिलते ही उसने उलाहना जरूर दे दिया। ठीक ऐसे ही, ईश्वर ने हमें जीवन दिया है और इतना सबकुछ दिया है, उसके प्रति धन्यवाद एवं कृतज्ञता व्यक्त करने की बजाय हम मन्दिर में या प्रार्थना के समय भगवान को उलाहना जरूर देते हैं।

ईश्वर के प्रति कृतज्ञता एवं आभार व्यक्त करना ही जीवन में सबकुछ प्राप्त करने का मूल मंत्र है। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

उपनिषद् ने कहा है - "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" अर्थात्, जिसने छोड़ा है उसी ने भोग किया है। यह विरोधाभासी वाक्य है क्योंकि छोड़ने वाला कैसे भोग सकता है। लेकिन यह सत्य है। जैसे - बुद्ध ने घर छोड़ा तब उनके हाथ का कमंडल खाली था और एक भिखारी खड़ा है उसके हाथ का कमंडल भी खाली है। सारांश यह है कि बुद्ध के हाथ वाला कमंडल खाली होकर भी भरा हुआ है। कारण? वह लोभ, लालच, मोह, धन, ऐश्वर्य, सम्मान, वैभव को भोगकर उससे भरकर खाली हुआ है। पर भिखारी का कमंडल पहले इन सब से भरने प्रयत्न करेगा फिर वह खाली होगा। अब वह इस जन्म में भी खाली हो सकता है और इस प्रयास में कई जन्म भी लग सकते हैं।

उपनिषद् कहते हैं कि जिसने छोड़ा, उसने ही पाया। कारण? बुद्ध ने धन, वैभव, ऐश्वर्य, सम्मान को छोड़कर अनमोल को प्राप्त कर लिया, स्वयं को जान लिया, ईश्वर को प्राप्त कर लिया। बुद्ध का भोगकर, अनुभव लेकर, स्वाद लेकर छोड़ना 'स्वाधीनता' है। 

प्रकृति त्रिगुणात्मक है — गीता का प्रमाण है। “सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः” सत्त्व, रजस, तमस — ये तीनों गुण प्रकृति से उत्पन्न हैं।

जैसे पहला- पहाड़ —तमस का प्रतीक है, इनका गुणः स्थिरता, जड़ता, भार, निद्रा है। पहाड़ सदियों तक एक जगह से हिलता नहीं है। यह तमस का प्रतीक है जो हमें जकड़ता है, आलस्य, मोह, भारीपन देता है।

लेकिन दूसरी तरफ़ इनका तमस हमें स्थिरता और आधार भी देता है।

दूसरा नदी— रजस का प्रतीक है

जिसका गुण है— गति, चंचलता, इच्छा, कर्म करना है, नदी एक पल भी नहीं रुकती है, अगर बाधा आए तो रास्ता बदल लेती है। रजस हमें चलाता है। महत्वाकांक्षा, बेचैनी, भाग-दौड़ देता है। यह जीवन को गतिमान बनाती है, बिना रजस के हमें बहना नहीं आ सकता है। तीसरा समुद्र —सत्त्व का प्रतीक है, इसका गुण —शांति, गहराई, समता, धारणा करना है, यह नदी का कचरा भी लेता है, तूफान भी झेल लेता है, फिर भी शांत रहता है। हमें सत्त्व साक्षी बनाता है। सत्त्व के अनुभव में अच्छा-बुरा सबको समाकर भी अडोल रहते हैं, यही आत्म-स्वरूप है।

ठीक इसी तरह यही तीन गुण हमारे शरीर और जीवन में भी है। तमसः आलस्य, नींद, जड़ता भ्रम, उदासी, जिद, रुक जाना, टालना। रजस— भाग-दौड़, थकान इच्छा, चिंता, क्रोध, पाना, सिद्ध करना। सत्त्वः आरोग्य, हल्कापन, शांति, विवेक, प्रेम, देना, समर्पण, साक्षी होना है।

इन तीनों में उलझने पर गुरु की आवश्यकता होती है क्योंकि गुरु वह दीपक है जो अँधेरे कमरे में पहचान कराता है: कि ये बेचैनी रजस की है। ये भारीपन तमस है। गुरु हमें दिशा देता है और तमस से उठाता है, रजस को साधता है, सत्त्व में ठहराता है।

जय गुरुदेव!

जब इंद्रियों के द्वारा दिए गए सिग्नल पर बुद्धि— "स्मृति + संस्कार" से मिलकर उस विषय पर बार-बार सोचने लगती है तब एक प्रकरण शुरू होता है।

आसक्ति से वासना पैदा होती है, निरंतर यह सोचने पर कि मुझे यह वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति चाहिए, तब स्मृति या संस्कार बोलता है कि ऐसा करने पर पहले भी मुझे मज़ा आया था और इससे भोगने की इच्छा जागृत होती है।

दूसरा—अब कामना पूरी नहीं होने पर क्रोध यहीं से पैदा होता है —जो मुझे मेरा चाहिए था, वह मिला नहीं है— अहंकार को चोट लगते ही क्रोध का उत्पन्न होना— और बुद्धि का नाश होता है, जिससे विवेक चला जाता है।

अब स्मृति, संस्कार का अच्छा होना दब जाता है और पुराने बुरे संस्कार हावी हो जाते हैं। बुद्धि का नाश होते ही अविवेक सक्रिय हो जाता है। यहाँ पर "मैं हूँ" का भाव होने के कारण अभिमान शुरू से अंत तक साथ रहता है, सारे खेल का कारण भी वही है।

इसका विज्ञान यह है कि जब इन्द्रियाँ + स्मृति, संस्कार मिलकर पुराने संस्कार में छिपे हुए हैं—और सुख भोगने के लिए आतुर होते हैं— एक अभिमान जागता है कि "मैं भोक्ता हूँ" — अब सुख भोगने में व्यवधान आते ही क्रोध आता है— अभिमान कहता है कि "मैं कर्ता हूँ, भोक्ता हूँ"।

सूत्र: अभिमान राजा है, काम-क्रोध-वासना उसके सिपाही हैं। राजा के इशारे पर सिपाही दौड़ते हैं।

निदान यह है कि—इस रोग को पहले ही स्टेज पर रोक दो जब इंद्रियाँ सिग्नल दे तब तुरंत होश में आकर बस देखो कि मैं देख रहा हूँ, लेकिन चिंतन मत करो। स्मृति एवं संस्कार खींचे तब संगत को बदलो जैसा संग, वैसा रंग और सत्संग, ध्यान, प्राणायाम आदि का अभ्यास करो, बुद्धि

फिसले उस समय अपने गुरु को याद करो— जिससे तुरंत विवेक जाग जाएगा — यही योग है।

जहाँ विवेक है वहाँ कोई क्रोध नहीं, कोई अभिमान नहीं, कोई वासना नहीं सिर्फ आत्मा से अस्तित्व का मिलना है। ❤️ 🙏

जय गुरुदेव!

उपनिषद् में ऋषि कहते हैं कि जीवन विपरीत स्वरो के बीच एक सामंजस्य है।

चेतना - मन और विचारों को पैदा करती है, ताकि हम विचारों की शून्यता को जान सकें। परमात्मा ने स्वयं को अनुभव करने के लिए इस संसार बनाया है। इस संसार में जीने के लिए भटकना जरूरी है। जैसे अच्छा-बुरा, पाप-पुण्य, काला-सफेद होता है, यह एक आत्म-खोज की यात्रा है। इसमें भटके बिना आत्मानुभूति बहुत मुश्किल है।

भगवान् बुद्ध से पूछे जाने पर कि यह आदमी अंधकार में क्यों गिरा, तो उनका उत्तर होता कि यह पूछो अंधकार से कैसे निकलेगा। कारण? गिरना तो इस संसार का नियम है और यह जरूरी भी है। ❤️👍❤️

जय गुरुदेव!

समुद्र पानी से लबालब भरा होने पर भी नदियाँ समुद्र की तरफ ही दौड़ती हैं। यह कभी भी नहीं सुना कि नदियाँ रेगिस्तान की तरफ दौड़ती हों। इसका कारण है कि पूर्णता ही प्रकृति का नियम है। नदियाँ समुद्र में मिलकर पूर्ण होना चाहती हैं।

मुझे यह मनुष्य जन्म मिला है, इसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ, मैं धन्यभागी हूँ। मुझे सबकुछ मिला है। हे प्रभु! यह आपका दिया हुआ कृपा प्रसाद है। यह एक पूर्णता है।

पूर्ण में से पूर्ण निकाल लें, तब शेष में 'पूर्ण' ही बचता है। जैसे - वृक्ष के एक बीज से करोड़ों वृक्ष पनप सकते हैं। कारण? वह ज़मीन में स्वयं को 'नहीं होना' कहता है, इससे बीज स्वयं को पूर्ण नष्ट करके पूर्णता को प्राप्त होता है। बाद में वही वृक्ष बनकर बहुत सारे बीज पैदा कर सृष्टि को प्रचुर मात्रा में पूर्णताएँ प्रदान कर देता है। इसलिये, हमारे ग्रंथों में कहा गया है -

पूर्णमदः पूर्णमिदम् पूर्णात् पूर्णमुच्यते।

पूर्णस्य पूर्णमादायपूर्णमेवावशिष्यते।। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

एक किसान सावन-भाद्रपद मास में खेत में काम करता है, जब बादलों से घिरा आसमान होता है। बादलों को चीरती हुई तीखी धूप जब उसके बदन पर पड़ती है, तो उसकी हालत असहनीय होती है लेकिन बीच-बीच में बड़ा सा बादल धीरे-धीरे आता है और सूरज को ढक लेता है, तब वही वातावरण ठंडा, सुरम्य, कोमल, मनमोहक हो जाता है।

ऐसे में किसान सुख की क्षणिक स्थिति को भोगकर मन में लौटता है और ईश्वर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है, लेकिन खेत में काम लगातार जारी रखता है। यही वर्तमान में मन के ठहरने का आनंद है। यही अवस्था व्यक्ति की तब होती है जब वह 'साक्षी भाव' में ठहरता है।

कोई भी व्यक्ति शांत होकर अपने शरीर को बादल की तरह धीरे-धीरे स्वयं को देखता है, तो वह शरीर और मन को शांत करके संतोष और आनंद प्राप्त कर सकता है उस किसान की तरह। तटस्थ अवस्था में अपने मन पर नियंत्रण करते हुए यह सोचता है कि 'बादल आए या न आए, मुझे कर्म में यूँ ही लगे रहना है', तब वह होश में आ जाएगा और यह अवस्था सच्चिदानन्द प्राप्ति की है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

आप एक बगीचे में गए। वहाँ पर खाद पड़ी है, जिससे पूरा बगीचा बदबूदार हो गया है। आप यह तय कर लेते हैं कि पूरा बगीचा बदबू से भरा हुआ है, लेकिन आप यह तय करने में शायद जल्दी कर रहे हैं। यही बदबू कल वृक्ष और फूल के पौधों को जीवन देगी, यही बदबू कल फूल को सुगंध देगी -

- दुर्गंध की पूर्णता सुगंध है।
- क्रोध की पूर्णता करुणा है।
- घृणा की पूर्णता प्रेम है।
- दुःख की पूर्णता सुख है।
- आदमी की पूर्णता ईश्वर है।

ये सब एक-दूसरे के पर्यायवाची और एक-दूसरे के पूरक हैं। फैसले में जल्दबाजी मत करो। पूर्णता पर पहुँचकर हर वस्तु और हर चीज बदल जाती है, आत्मबोध को प्राप्त हो जाती है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

सुई और कैची लोहे की धातु से बनी होती है फिर भी इनके नाम और काम में भेद होता है। गहने सोने या अन्य कीमती धातु या कीमती पत्थरों से बने होते हैं, फिर भी इनके नाम और पहनने का भेद होता है। यह सारे भेद मनुष्य द्वारा निर्मित हैं। ऐसे ही प्रकृति द्वारा भेद बनाये गए हैं, जैसे - किसी स्त्री-पुरुष का भेद, शेर और गाय में भेद होता है। यह सब भेद प्राकृतिक हैं, मनुष्य द्वारा निर्मित नहीं हैं। एक बात समझने योग्य है कि मनुष्य के पास बुद्धि होने से वह भगवत् प्राप्ति के रास्ते पर चल सकता है, लेकिन यह प्राकृतिक रास्ता नहीं है। और भी मजे की बात यह है कि उसे इस रास्ते पर चलने की स्वतंत्रता भी मिली हुई है जिससे वह ईश्वर तक पहुँच सकता है। भगवत् प्राप्ति का पथ, 'प्राकृतिक' नहीं होकर 'त्रिगुणात्मक' है, जैसे-जैसे मनुष्य में तीन गुणों की वृद्धि होती है (सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण), मनुष्य भगवत् प्राप्ति की स्थिति को प्राप्त करता रहता है।

हर गुण की अपनी अलग पहचान होती है। यह ईश्वर की खोज का रास्ता है। गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं - मनुष्य अगर विवेकपूर्ण होकर सोच ले कि सृष्टि इन गुणों के आधीन है, तो वह उसी समय मुक्त हो सकता है।



जय गुरुदेव!

तेज गति से चलने के लिए हाईवे पर चलना पड़ता है। तेज रफ़्तार के समय स्वयं का संतुलन बनाए रखना पड़ता है। इसके साथ-साथ आपके आगे-पीछे जो गाड़ियाँ चल रही है उनके प्रति आपको उतनी ही शुभकामना और खुशी का ध्यान रखना पड़ता है, जितनी आप स्वयं की रखना चाहते हैं, तभी आप निर्विघ्न, सुरक्षित, स्वस्थ और सुखपूर्वक अपने गंतव्य पर पहुँच सकते हैं। ठीक इसी तरह जीवन के मार्ग में तेज चलने के लिए आसपास के सभी लोगों के प्रति शुभकामना, उनकी खुशी का ध्यान रखने पर ही आप बिना अवरोध के, सुखपूर्वक, सुरक्षित जीवन की यात्रा तय कर सकते हैं और ऐसा करने पर आपको पता भी नहीं चलेगा कि मैं यहाँ तक कैसे पहुँच गया हूँ। इसलिए हमारे ग्रंथों में कहा गया है - "लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु।" ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

आपके दुश्मन के ज़िंदा रहने की उतनी ही ज़रूरत है, जितना आपके एक मित्र के ज़िंदा रहने की है। दुश्मन के मरने पर उतनी ही कमी हो जाती है, जितनी कि किसी मित्र के मरने पर होती है। आपके जीवन में अच्छा दुश्मन होना एक भाग्य की बात होती है। अच्छे दुश्मन से हमेशा तनाव व खिंचाव बना रहता है। वह आपको लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आगे बढ़ने की प्रेरणा देता रहता है। दुश्मन एक अवसर है, न कि बाधा। दुश्मन के मिटते ही आप मिट जाते हैं। कारण? दुश्मनी के साथ में जो आपकी रचना की हुई थी, वह सब गिरकर क्षीण हो जाती है। हारा हुआ तो हारता ही है, परंतु जीते हुए को भी दुष्परिणाम हाथ लगते हैं।

इसलिए यह समझना ज़रूरी है कि विरोधात्मक बातें एक-दूसरे की पूरक होती हैं, इनके नहीं होने पर जीवन नीरस होता है, इनको स्वीकार करना जीवन की पूर्णता है, ठीक वैसे ही, जैसे - दोस्त-दुश्मन, प्रकाश- अँधेरा, भलाई-बुराई, सुख-दुःख, काला- सफ़ेद। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

मृत्यु एक असत्य है। मनुष्य दो तत्वों का जोड़ है। एक तत्व शरीर है जो 'मरणधर्मा' है, वह पहले से ही मरा हुआ है, उसकी मृत्यु कैसे हो सकती है और दूसरा तत्व 'अमृत' है, उसकी तो मृत्यु हो ही नहीं सकती है। न शरीर मर सकता है (क्योंकि वह तो पहले से ही मरणधर्मा है) और न आत्मा मर सकती है (क्योंकि आत्मा अमृत है), तो फिर मरता कौन है? मृत्यु किसकी होती है?

मरता कोई भी नहीं है, जो मृत दिखता है, वह सिर्फ शरीर और आत्मा के बन्धन से छूटता है। हम दोनों के संबंध को जीवन समझ लेते हैं और दोनों के सम्बन्ध छूटने को मृत्यु समझ लेते हैं ।

हम यह मान लेते हैं कि 'मैं शरीर हूँ', तभी मृत्यु घटती है। अगर हम यह जान लें कि 'मैं शरीर नहीं हूँ', तो फिर कैसी मृत्यु है! आत्मा मर नहीं सकती, आत्मा अमृत और अमर है। अगर जीवन रहते हुए इस तत्व को जान लिया जाए, तो मृत्यु में हँसते हुए, नाचते हुए, गाते हुए प्रवेश करोगे क्योंकि यह तो सिर्फ संबंध ही छूट रहा है। यह जीवन एक 'देहोहम्' से 'चैतन्योहम्' तक और 'शरीरोहम्' से 'शिवोहम्' तक की यात्रा है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

एक सराय में चार दोस्त ठहरे थे। उन सबको अपनी-अपनी पसंद का भोजन करना था, परसभी दोस्तों के पास रुपये भी सीमित थे और उन सब की भाषा भी अलग-अलग थी।

एक-दूसरे को अपनी समझाने में उनका झगड़ा हो गया कि सीमित मूल्य में सबकी पसंद का खाना कैसे मिल सके। सराय के मालिक ने सबको झगड़ते हुए देखकर कहा कि तुम्हारे सारे रुपये मुझे दे दो, मैं तुम सबकी पसंद का भोजन लेकर आता हूँ।

वो पैसे लेकर गया और सारे पैसों के अंगूर खरीद कर ले आया। सभी दोस्त अंगूर देखकर नाचने लगे और बहुत खुश हुए। कारण? सभी को अंगूर ही चाहिए थे, लेकिन सबकी भाषा अलग थी। सराय का मालिक सबकी भाषा जानता था, तो वह उनका बात समझ गया।

हमारे उपनिषद् भी उस एक की ही बात करते हैं कि वह अनाम है, वह अरूप है, वह निराकार है। फिर भी, संसार में व्यक्तियों द्वारा परमात्मा का अलग-अलग नाम देने से उनके बीच मतभेद और संघर्ष चलता रहता है



जय गुरुदेव!

दूसरों को सुनना एक महान कला है। समस्या यह है कि हमने किसी के मन की आवाज हो या बाहर की आवाज, उसे सुनने की क्षमता को विकसित नहीं किया है। जब हम किसी दूसरे को पूरी तरह से सुनते हैं, उस समय हम अपनी खुद की समस्याओं, नकारात्मक विचारों, सुरक्षा के प्रति चाहत क्या है उसे समझने लगते हैं। तब हमें यह गहराई से समझ में आता है कि मेरी तरह ही सभी के जीवन में, लोगों के साथ एक जैसी ही समस्याएँ एवं चाहत है। हम दूसरों को एवं प्रकृति को सुनने से संवेदनशील, जीवंत एवं सक्रिय होते हैं। तब समझ आता है कि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' यही है और सारी दुनिया मेरा परिवार है। 🙏

जय गुरुदेव!

ये चार प्रकार की इच्छाएँ मन में असंतोष पैदा करती हैं -

वित्तेष्णा: धन पाने की इच्छा या कामना। मैं धनपति बन जाऊँ।

पुत्रेष्णा: मेरा पुत्र बड़ा होकर संसार में मेरा नाम रोशन करेगा।

लोकेष्णा: लोक में प्रसिद्धि की लालसा, कि मैं प्रसिद्ध हो जाऊँ।

जिवेष्णा: लंबी उम्र के विषय में व्याकुलता, कि मैं कभी मरूँ नहीं, अमर हो जाऊँ।

ये अवस्थाएँ मन को जकड़ सकती हैं, जिससे आपकी ऊर्जा खत्म हो सकती है। पहला कदम यह पहचानना है कि आप पर इन सभी अवस्थाओं का क्या प्रभाव पड़ रहा है। आध्यात्मिक साधना, ज्ञान और ध्यान आपको इनसे सहजता से ऊपर उठने में मदद करता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

ध्यान का स्रोत होता है 'स्वयं का सम्मान करना' और अपने शरीर को देखना होता है। कारण? आपको स्वयं में परमात्मा देखना होता है, तभी ध्यान घटता है।

यह तभी संभव है जब तुम अपनी रोजाना की दिनचर्या में अपने परिवारजनों तथा सभी में श्रद्धा और विश्वास से भगवान को देखोगे। तभी तुम्हारे अंदर भगवान देखने के संस्कार पैदा होते हैं। ऐसा करते हुए एक दिन तुम्हारे साथ यह घटना घट जाती है और पंचतत्त्व से बने हुए आपके इस शरीर में पंचतत्त्व से ही बने भगवान के दर्शन हो जायेंगे। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

द्रष्टा से मिलने का, द्रष्टा को देखने का प्रयास करें, जैसे - एक पेड़ को देखें और फिर उस देखने वाले को देखें जो उस पेड़ को देख रहा है।

इस प्रयास को फिर-फिर करें। आप बार-बार भूलोगे क्योंकि आप कई जन्मों से भूलते चले आ रहे हो, लेकिन सिर्फ एक बार अगर संयोग बैठ गया, तो अपूर्व शांति और आनंद की अनुभूति होगी और आप अपने जीवन में एक नई ऊर्जा का अनुभव करेंगे।

इससे आपको जीवन के उद्देश्य को समझने में मदद मिलेगी और आप जीवन को बेहतर दृष्टिकोण से देखेंगे। कारण? आपका स्व-स्वरूप द्रष्टा होना ही है, इससे आपको आत्म-साक्षात्कार का अनुभव मिलेगा और आपको वास्तविक स्वरूप जानने का अवसर मिलता है। 🌺🙏❤️

जय गुरुदेव!

सत्संग में बैठकर भजन सुनते समय तुम्हारा मन घर पर चला गया है। अब मन से कहो – “मैं तो शरीर से यहाँ सत्संग में बैठा हूँ, मेरे मन! तू वहाँ घर पर क्या कर रहा है!” यह बात मन को तुम्हें बार-बार कहनी पड़ेगी।

मन के बारे में एक बात जरूरी है कि जब यह एक जगह से दूसरी जगह जाता है, उससे पहले एक बार आपसे मिलकर जरूर जाएगा। यह उसकी आदत है। इसको ‘चित्त वृत्ति’ कहते हैं। उस समय तुम सजग होकर मन से कहो कि भाई, थोड़ी देर इस शरीर के साथ भी ठहर जा।

इस मन का शरीर के साथ ठहरने की स्थिति को ही ‘योग’ कहते हैं। कारण? वहाँ तन और मन दोनों का मिलन हो जाता है। फिर आप विश्राम करें, यह विश्राम ही ध्यान है। जहाँ कोई अनुभव नहीं होता है, वही समाधि में जाने का रास्ता है। 🙏❤

जय गुरुदेव!

हमारे मस्तिष्क में क्रोध, भय, प्रेम के बिंदु होते हैं। बुद्ध के जीवन में एक ऐसी घटना है जब उनके ऊपर एक पागल हाथी छोड़ा गया था। जैसे ही हाथी बुद्ध के पास पहुँचा, उसने अपनी सूँड़ को उनके चरणों में रखकर प्रणाम किया और वहीं बैठ गया। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि बुद्ध साक्षात् करुणा और प्रेम की दिव्य मूर्ति थे। उनके शरीर के चारों ओर, उनके हर अस्तित्व में प्रेम और करुणा की लहरें बह रही थीं, जो पूरे वातावरण को प्रभावित कर रही थीं। हाथी भी अस्तित्व का हिस्सा है और प्रकृति का नियम 'प्रेम' है। जंगल में शेर का स्वभाव मार डालना नहीं है, बल्कि संतुलन बनाए रखना है। वह आवश्यकता से अधिक नहीं खाता क्योंकि प्रेम और संतुलन ही जीवन का मूल है। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

1. जब अत्यधिक पीड़ा की अवस्था से व्यक्ति गुजरता है, तब अपने आंतरिक स्वरूप को खोजने की इच्छा जागृत होती है। यह पीड़ा उसे अपने जीवन के उद्देश्य और अर्थ को समझने के लिए प्रेरित करती है।
2. जब अत्यधिक शारीरिक ऊर्जा उत्पन्न होती है, तब व्यक्ति वह अपने आंतरिक स्वरूप को अनुभव करने के लिए तैयार होता है। यह ऊर्जा व्यक्ति के जीवन में परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित करती है।
3. जब समाधि की अवस्था में व्यक्ति अपने मन को शांत और स्थिर करता है, उस स्थिति में वह अपने आंतरिक स्वरूप को अनुभव करने के लिए प्रेरित होता है।
4. जब व्यक्ति दिव्य-प्रेम को अनुभव करता है, ऐसे में अपने आंतरिक स्वरूप को जानने के लिए तैयार होता है। यह प्रेम उसे अपने जीवन में परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित करता है।
5. अद्वैत भाव की उत्पत्ति में व्यक्ति अपने आंतरिक स्वरूप को अनुभव करता है, जिससे वह अपने जीवन के उद्देश्य और अर्थ को समझता और जीवन में परिवर्तन के लिए प्रेरित होता है।

जय गुरुदेव!

सागर का पानी खारा होता है, लेकिन वह अपने पानी को मीठा करने के लिए सूरज को दे देता है। सूरज, पानी को अपने पास नहीं रखकर बादल को दे देता है। सूरज और बादल, दोनों की देने की आदत होती है, इसलिए उनकी शुद्ध भावना को छूकर पानी मीठा हो जाता है और बरस जाता है। उस पानी को नदियाँ भी अपने पास नहीं रखकर बाँट देती हैं और इस तरह प्रकृति का मूल सिद्धांत पूरा होता है - बाँटना। जिसने बाँटना सीख लिया, उसके पास फिर से बढ़ता चला जाता है, कभी खत्म नहीं होता। कोई भी वस्तु, धन, अच्छे विचार बाँटने से मीठे और शुद्ध होते हैं और बढ़ते हैं।

यह प्रकृति का नियम है कि जो देता है, वही पाता है। तो आइए, हम भी अपने जीवन में बाँटने की आदत डालें और देखें कि कैसे हमारे जीवन में सुख-शांति और आनंद बढ़ता है। 🧡🙏

जय गुरुदेव!

एक छोटा बच्चा भयमुक्त रहता है क्योंकि प्रकृति ने उसे थाम रखा होता है, इसी कारण बच्चे में खुशी, उत्साह, ऊर्जा, मुस्कराहट भरपूर रहती है। इस निर्भयता के कारण एक दिन वह जलती हुई मोमबत्ती पकड़कर अपना हाथ जला बैठता है, तब भी प्रकृति उसे जल्दी स्वस्थ कर देती है। लेकिन जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, प्रकृति से दूर होता जाता है और उसमें सुरक्षा व शरीर के प्रति भय उत्पन्न होता जाता है - यह कब और कैसे होता है, इसका अंदाज़ा उसे खुद को भी नहीं होता है। प्रकृति से साथ छूटते ही उसे विवेक को जगाना चाहिए कि उसके लिए भला-बुरा क्या है। इस जागने की क्रिया को ही 'होश' कहते हैं।

समझने की बात यह है कि प्रकृति के साथ रहते हुए, विवेकपूर्ण और सकारात्मक स्वच्छंद वातावरण में जीवन जीना ही 'शिवमय' होना है। समन्वय के साथ जीवन जीना ही 'शिवोहम्' है। अपनी समझ को विकसित करते हुए संतुलन बनाकर रखना ही जीवन जीने की कला है। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

शांत एवं सुखी जीवन के लिए समर्पण आवश्यक है। समर्पण का अर्थ कायरता और आलस्य नहीं है, बल्कि अकर्ता भाव से और नियंत्रण छोड़कर कर्म करना है। धारा के साथ बह जाना ही समर्पण है, जिससे ऊर्जा सकारात्मक होती है और बिना थके हुए समय से पहले कार्य सम्पूर्ण होता है।

समर्पण का अर्थ है - जो जैसा है उसको स्वीकार करो। जैसे सूर्य अपने नियत समय पर उदय होता है, कोई उस समय उठ जाता है तो ठीक है और नहीं उठा, तो भी सूर्य का किसी पर नियंत्रण नहीं है - उसका कर्म समय पर उदय होना है। 'अकर्ता भाव' से निरन्तर कार्य करते रहना ही समर्पण है और यही प्रकृति के नियमानुसार चलना है। यही प्रकृति के साथ नृत्य है। यही ध्यान है। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

श्वास की प्रक्रिया का पहला सूत्र - श्वास का केंद्र नाभि से दो इंच नीचे की तरफ़ होता है। इसलिए श्वास लेते समय ध्यान नाभि पर रखें।

दूसरा सूत्र - हमेशा बाहर जाती हुई श्वास पर ध्यान दें, श्वास लेने का काम तो प्रकृति का है, यह वो अपने आप करेगी। आपका ध्यान और प्रयास श्वास छोड़ने पर होना चाहिए। इससे आपके मन की दशा बच्चे की तरह कोमल हो जाएगी क्योंकि श्वास लेने में भार होता है और छोड़ने में हल्कापन आता है।

तीसरा सूत्र - स्वयं को श्वास से अलग न समझें। जब श्वास भीतर आए, तो लगे कि 'मैं' भीतर आ गया और श्वास बाहर जाए, तो लगे कि 'मैं' बाहर चला गया। श्वास के साथ एक हो जाएँ। ऐसा करने से आदमी किसी बालक की तरह कोमल हो जाता है। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

असङ्गोऽसि निराकारो विश्वसाक्षी सुखी भव॥ (अष्टावक्र गीता)

पहला - तुम निराकार हो। कारण? जो तुम्हारा आकार है वह हमेशा बदलने वाला है।

उदाहरण - किसी खुशी में तुम्हारा चेहरा (आकार) खिला हुआ होता है और किसी चिंता के समय मुरझाया हुआ होता है। यह तुम नहीं हो। मेरा यह शरीर बदलता रहता है।

मैं यह शरीर नहीं हूँ, यह सोच कर विश्राम करते ही ज्ञान को प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार की विश्राम की अवस्था में तुम मुक्ति का अनुभव कर सकते हो, वह साक्षी की अवस्था है। इस अवस्था में निराकार महसूस करते हुए शून्य हो जाना ही ध्यान की अवस्था है। वही चैतन्य की अवस्था है। इसके बाद तुम्हें ताजगी, सुख, स्फूर्ति, शांति का अनुभव होगा, वही असंग है। 🙏❤

जय गुरुदेव!

हमारा मन अक्सर कई पूर्वाग्रहों से भरा होता है। इन पूर्वाग्रहों से ऊपर उठने और अपनी छठी इंद्री तक पहुँचने के लिए आपको ध्यान करने की ज़रूरत है। केवल ध्यान ही आपको बुद्धि के पूर्वाग्रहों से ऊपर उठने में मदद कर सकता है। खुद को थोड़ा समय देने और रोज़ाना ध्यान का अभ्यास करने से आपके लिए एक नया आयाम खुल जाएगा। तब आप देखेंगे कि जीवन में कितनी सुंदरता और प्रेम है। यह आपको पूरी तरह से आराम की स्थिति में ले जाएगा, जहाँ आप कुछ भी नहीं चाहते, कुछ भी नहीं होते, कुछ भी नहीं करते और फिर भी सहजता से पूरी तरह से सतर्क रहते हैं। यह सर्वोच्च प्रार्थना है, जो आपको जीवन में मिलने वाले आनंद और अनुग्रह की एक झलक देगी। ❤️🙏😊

जय गुरुदेव!

पेड़ आपको सिखाते हैं कि विकास के लिए धैर्य की आवश्यकता होती है।
हवा आपको सिखाती है कि आप अपनी इच्छानुसार दिशा और गति बदल सकते हैं।

फूल आपको सिखाते हैं कि सुंदर या कुरूप चीज़ सालभर नहीं खिलती,
परिस्थिति हमेशा बदलती रहती है।

सागर आपको सिखाता है कि आप गहरे में शांत होते हैं और ऊपर से
अस्त-व्यस्त, सौम्य और मज़बूत, दोनों तरह के हो सकते हैं।

तारे आपको सिखाते हैं कि प्रकाश को देखने के लिए अंधकार आवश्यक
है, तभी प्रकाश देखने का मज़ा है।

सूर्य आपको सिखाता है कि आप चाहे कितने भी समय तक छिपकर रहें
लेकिन आप हमेशा फिर से उभरेंगे। इसलिए, अपनी सात्विक ऊर्जा को
बिखेरते रहें।

इस प्रकार सोच-विचार से आपका प्रकाश और आपकी ऊर्जा बढ़ती
रहेगी। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

परमात्मा स्वतंत्रता है, जो किसी के अधीन नहीं है। परतंत्रता यानि अधीनता के लिए किसी और का होना जरूरी है। परमात्मा सिर्फ अकेला है। आत्मा का स्वभाव मोक्ष है, मुक्त है, एक बूँद नदी के साथ बही जा रही है। अगर वह बूँद कहे कि मुझे नदी के साथ बहना पड़ रहा है, तो वह परतंत्र हो गई!। अगर वह बूँद कहे कि मैं अपनी इच्छा से नदी के साथ बह रही हूँ, तो स्वतंत्र हो गई! अगर वह बूँद कहे कि मैं तो नदी हो गई हूँ, तो वह मुक्त हो गई!

आत्म-साक्षात्कार में यही घटता है। मुक्त होना एकता का पर्याय है क्योंकि इस समष्टि एवं सृष्टि के साथ एक होना ही मुक्त होना होता है।❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

जीवन में छह तरंगें होती हैं - शरीर की दो तरंग (भूख और प्यास), मन की दो तरंग (शोक और मोह), प्राण की दो तरंग (जन्म और मृत्यु)।

भूख - एक स्वस्थ शरीर में भूख ज़्यादा और बीमारी में भूख कम लगती है। यह एक तरंग है।

प्यास - धूप में ज़्यादा प्यास लगती है, ठंड में कम प्यास लगती है क्योंकि यह भी तरंग ही है।

शोक - करीबी व्यक्ति की मृत्यु पर शोक होता है। कारण? घटना— मन पकड़ लेती है। यह भी तरंग ही है।

मोह - जब कोई अपना मिलकर बिछड़ता है, तो दुःख होता है। कारण? उसके साथ रहने से मोहवश घटना- मन पकड़ लेती है। यह भी तरंग है।

जन्म - जब बच्चे का जन्म होता है, तो पहली साँस लेने के लिए बच्चे को रुलाया जाता है कि साँस के साथ प्राण आ जाए। यह एक तरंग है।

मृत्यु - जब मृत्यु होती है, तो सबसे पहले साँस ही साथ छोड़ती है, यानि प्राण निकलते हैं। यह भी तरंग है।

अब समझें कि मनुष्य का सच्चिदानंदन स्वरूप इन छह तरंगों के परे है। वही स्वरूप साक्षी है। वही स्वरूप द्रष्टा है। वही तुम हो। तुम इन तरंगों के साथ असंग हो। तुम शरीर में जलवत कमल की तरह रहो, शरीर तुम्हारा साधन है, इसे साध्य मत बनाओ।❤

जय गुरुदेव!

किसी चीज को बार-बार दोहराकर हम उसको वास्तविक बना लेते हैं, उसको चिंता कहते हैं। चिंता न तो समाधान है, न ही सुरक्षा। चिंता करने से एक ऐसा हॉर्मोन रिलीज होता है, जो हमारे शरीर को धीरे-धीरे तोड़ देता है। आध्यात्म के अनुसार चिंता से व्यक्ति का आभामंडल गायब हो जाता है, आत्मा का संपर्क टूट जाता है और चेहरा मुरझा जाता है तथा व्यक्ति का ब्रह्माण्ड से संपर्क टूट जाता है।

ब्रह्मांड हमेशा उच्च तरंग पर काम करता है। चिंता को छोड़ना साहस का काम है, यह कमजोरी का लक्षण नहीं है।

जब व्यक्ति ब्रह्माण्ड की शक्ति पर विश्वास करता है और ब्रह्मांड में यह कहता है कि अब यह मेरी जिम्मेदारी नहीं है, अब से यह तुम्हारी है, तब जीवन में असल चमत्कार शुरू होते हैं। छोड़ना ही प्राप्त करना है।



जय गुरुदेव!

जब आपके नाम को कोई गाली देता है, तब आपको लगता है कि गाली आपको दी गई है, जबकि आपको यह ज्ञात है कि यह नाम सिर्फ पुकारने के लिए है, इससे आपका कोई लेनादेना नहीं है। दूसरी तरफ, जब आपके नाम का कोई जयकार करता है, तब आपको ज्ञात है कि यह तो सिर्फ मेरे नाम का जयकार किया जा रहा है, मेरा इससे कोई संबंध नहीं है।

ऐसा समझ में आना कि मैं तो अनाम हूँ और यह गाली या जयकार अस्थायी है, नाम के सम्बन्ध में यह स्मरण रखते हुए चलना ही ध्यान बन जाता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

तालाब में एक पत्थर के गिरते ही लहर पैदा हो जाती है, लेकिन महासागर में पूरा पहाड़ गिरने से भी उसकी शांति भंग नहीं होती। एक छोटा-सा पत्थर गिराकर आपके आसपास के लोग आपकी शांति को भंग कर देते हैं, आपके बटन को दबा देते हैं। यही आश्चर्य है कि आपने बटन दबाने का अधिकार किसी दूसरे को दे दिया है। सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि मनुष्य, जो शांति और आनंद का महासागर है, वह किसी छोटी-सी बात से परेशान होकर एक छोटे से तालाब की तरह व्यवहार करता है। यह उसकी अपनी ही भूल है क्योंकि उसने अपने मन को नियंत्रित करने की शक्ति को खो दिया है। लेकिन अगर वह अपने मन को समझे, अपने विचारों को पहचानें, तो वह महासागर की तरह शांत और स्थिर रह सकता है और कोई भी पत्थर उसकी शांति को भंग नहीं कर सकता। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

क्या आपने स्वयं को कभी धन्यवाद कहा है? जीवन में आप जिसके साथ सबसे अधिक हैं, वह आप स्वयं हैं। खुद से प्यार करें, अपनी सराहना करें और अपने आप को प्राथमिकता के रूप में मानें। अपनी विशिष्टता का जश्न मनाएँ क्योंकि आप अपने खुद के सबसे अच्छे दोस्त हैं। अपने स्वयं का जयघोष करें, अपने जीवन के हर पल को अपने बारे में बनाएँ। किसी और से उम्मीद न करें कि वह आपको सत्य बताएगा क्योंकि सत्य तो आपके भीतर ही है। बार-बार खुद से प्यार करते रहें, खुद को स्वीकार करें और अपने आप को माफ़ करें। यही आत्म-प्रेम का मार्ग है, जो आपको शांति, सुख और संतोष की ओर ले जाता है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

🙏 उपनिषद् में ऋषि कहते हैं - "अहम् ब्रह्मास्मि", अर्थात् "तुम ब्रह्म हो"। यह एक ऐसा कथन है, जो हमें अपने भीतर की गहराइयों में ले जाता है, जहाँ शब्दों का कोई अर्थ नहीं रह जाता। उपनिषद् में ऋषि का 'ब्रह्म' कहना यह सिद्ध नहीं करता और ना ही ऋषि इस विषय पर तर्क या बहस करते हैं।

जो शब्दों में कहा जा सकता है, वह सत्य नहीं हो सकता है क्योंकि सत्य तो निःशब्द है, मौन है। ब्रह्म का होना सत्य है और यह अनुभूति शब्दों से परे है। तुम देख लोगे तो जान लोगे, तब स्वतः ही पता लग जायेगा। तर्क करने से कभी भी नास्तिक से आस्तिक नहीं हुआ जा सकता है, और न ही आस्तिक से नास्तिक हुआ जा सकता है। यह हृदय के बदलाव से ही संभव है।

तुम्हारा होना ही ब्रह्म का प्रमाण है, ईश्वर का प्रमाण है। यह एक ऐसा सत्य है, जो हमें अपने भीतर से अनुभव करना होता है और जब हम इसे अनुभव करते हैं, तो हमारे जीवन का अर्थ बदल जाता है। ❤️🙏

जय गुरुदेव!

महात्मा भूरी बाई की यह वाणी हृदय-स्पर्शी एवं इसमें गहन ज्ञान छिपा हुआ है -

“चुप्प साधन चुप्प साध्य है।

चुप्प में चुप्प समाय ॥

चुप्प समझाँरी समझ है।

जो समझे चुप्प हो जाय ॥”

“मौन या चुप रहना - साधन और साध्य दोनों हैं क्योंकि चुप रहने से ही चुप में समाहित हो जाते हैं।

चुप रहने की समझ ही सबसे बड़ी समझ है, जो इसे समझता है, वह स्वयं चुप हो जाता है। यह वाणी हमें बताती है कि मौन रहने से ही हम अपने भीतर की गहराइयों को समझ सकते हैं और यही समझ हमें शांति और आनंद की ओर ले जाती है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

तुम जितने जागरूक होते हो, उसी के अनुसार तुम्हारे चारों तरफ की सभी वस्तुएँ ज्ञान लाती हैं। यदि तुम होश में नहीं हो, तब तुम्हारे लिए सबसे मूल्यवान ज्ञान का भी कोई अर्थ नहीं है। तुम्हारी पाँच इंद्रियाँ खिड़कियों के समान हैं, जो तुम्हें दुनिया के साथ जोड़ती हैं।

जब तुम जागृत होते हो, तो तुम अपनी खिड़कियों को इच्छानुसार खोलने और बंद करने की योग्यता पाते हो। तुम चुन सकते हो कि क्या देखना है, क्या सुनना है, क्या महसूस करना है, क्या खाना है। यह तुम्हारी मुक्ति का मार्ग है।

अपनी खिड़कियों को खोलने और बंद करने की तुम्हारी कुशलता तुम्हारी सजकता पर निर्भर है। यदि तुम जागरूक हो, तो तुम अपनी इंद्रियों को नियंत्रित कर सकते हो और यदि तुम सजग नहीं हो, तो तुम उनकी गुलामी में फँस जाते हो।

इसपर ध्यान देना ही 'साधना' या 'आध्यात्मिक-अभ्यास' है। यह तुम्हें अपनी इंद्रियों के पार देखने की शक्ति देता है और तुम्हें अपने भीतर की शांति और आनंद का अनुभव कराता है। ❤️🙏"

जय गुरुदेव!

साधना के तीन अंग –

१) श्रवण : सम्यक् श्रवण। निर्विचार होकर, पूरे प्राणों से वाक्य को सुनना तथा उस समय जो सुना है, उसपर कोई भी निर्णय नहीं लेना। मात्र सुनना है, जैसे - सुना कि तत्त्वमसी (तू वही है)।

२) मनन: जो सुना है, उसपर स्वयं विचार विमर्श करना और सही-गलत का चुनाव करना। जैसे – ‘तत्त्वमसी’ वाक्य सुना है, उसके बारे में सही और गलत का फैसला करना ।

३) निधिध्यासन : जिस वाक्य को श्रवण किया है, उसका मनन करने के बाद सही और गलत में जो चुनाव किया है, उस पथ पर अडिग रहते हुए चलना और उस पथ पर जो अनुभव हुए हैं उनपर टिके रहना। जैसे - ‘तत्त्वमसी’ वाक्य को सही मान लिया, तो उसे अपने जीने की प्रक्रिया बनाना।

जय गुरुदेव! 🙏

एक सुंदर सुबह, सूर्योदय के समय दो दोस्त विश्राम की मुद्रा में आँखें बंद किये हुए झोपड़े में बैठे हुए थे। तभी एक दोस्त उठकर झोपड़े से बाहर गया, तो उसने देखा कि पहाड़ियों के बीच पूरा आसमान सूर्य की लाल रोशनी से ढका हुआ है। चारों तरफ़ पंछी भाँति-भाँति की बोली सुना रहे थे और ओस की बूँदों की चमक पौधों पर साफ़ दिखाई दे रही थी।

बाहर के दोस्त ने बड़े ही प्रेम और सत्कार से झोपड़े के अंदर वाले अपने दोस्त को पुकार कर कहा, "प्रिय मित्र! बाहर आकर देख। ऐसा लग रहा है, जैसे परमात्मा ज़मीन पर उतर आया है। क्या अद्भुत नज़ारा है! सुंदर, सुहावना मौसम है। आओ सखा, बाहर आकर देखो"।

तभी मुस्कान के साथ भीतर से दोस्त की मीठी और कोमल आवाज़ आई, "मेरे मित्र, भीतर तू ही आ जा। मैं भीतर अपने परमात्मा से मिल रहा हूँ। तू ही भीतर आ जा"।

यह हमारा शरीर भी एक ब्रह्मांड है, इसके अंदर वह सबकुछ है जो बाहर प्रकृति में है। एक यौगिक सूत्र है कि "यत् पिण्डे तत् ब्रह्मांडे" - जो इस शरीर में है, वह सब ब्रह्मांड में है। यह बाहर की प्रकृति और आंतरिक प्रकृति के मिलन का संदेश है। 🙏❤️❤️

जय गुरुदेव!

"भौतिक जीवन में आपको यह अहसास होता रहता है कि पृथ्वी पर आप केवल देने के लिए हैं, लेकिन आध्यात्मिक-जीवन की यात्रा 'कृतज्ञता' से शुरू होती है। क्यों? क्योंकि इसमें आपको पता चलता है कि आप पृथ्वी पर केवल लेते रहते हैं। जैसे - आप जब पैदा हुए थे, उस समय आपका वजन 2 किलो या 3 किलो था, उसके बाद जो भी बढ़ोतरी हुई है, भौतिक या आध्यात्मिक, वह आपने इस प्रकृति और पृथ्वी से ही लिया है। इसका मतलब है कि आप अपनी तरफ़ से कुछ भी नहीं दे रहे हैं, आपने जो लिया वही वापस लौटा रहे हैं।

आपको प्रकृति ने बिना माँगे सबकुछ दिया है, जैसे - साँस, पानी, हवा, सूरज। वेदांत का सार भी यही है - "तत्त्वमसि" या "अहम् ब्रह्मास्मि" (तुम वही हो जो प्रकृति है, यानि सब एक ही है। मैं ब्रह्म हूँ, मतलब तेरे अन्दर वही है जो प्रकृति में है)। सार "वसुधैव कुटुंबकम्" ही है और इसको समझना ही 'ध्यान' है, यही 'साधना' है, यही 'गुरु ज्ञान' है।"



जय गुरुदेव!

उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया कर्म ही हमारे अनुभव बनते हैं।

जैसे - जब बरसात हो रही हो, उस समय हमारा ध्यान अपने कपड़ों पर होता है, कि कपड़े गीले होकर उनकी क्रीज खराब न हो जाय। हमारा ध्यान प्रकृति के साथ बरसात होने की कितनी बड़ी घटना घट रही है, वह हमारे अनुभव में नहीं आती है।

हमें बादलों की छवि दिखाई नहीं पड़ती है कि उनमें से बारिश हो रही है, परंतु हमें बाहर बालकनी में कपड़े गीले होने की चिंता जरूर है। प्रकृति जो विराट संदेश देना चाहती है, वह सब खो जाता है, जिस प्रकार फूल खिलता है और अपनी सुगन्ध छोड़ जाता है, लेकिन हमारे अनुभव में भी नहीं आता।

हमें क्षुद्र को छोड़कर विराट को देखना चाहिये, जिससे हम आत्म-स्वरूप को जान सकते हैं। प्राकृतिक घटना के साथ गहराई से रहने से आश्चर्य बोध होता है, इससे आनन्द बोध होता है।   

जय गुरुदेव!

एक सम्राट ने अपने जवान बेटे को राज्य में कोई गलत काम करने पर अपने देश से निकाल दिया। अब इस घटना को बीस साल बीत गए थे, सम्राट का बेटा भीख माँगकर अपना जीवन यापन करने लगा और वह भूल ही चुका था कि वह किसी सम्राट का बेटा था।

गरीब और भीख माँगकर खाने से उसकी हालत दयनीय हो चुकी थी। इतने समय के बाद उसके पिता भी बूढ़े हो चुके थे। एक दिन उन्हें अपने बेटे की याद आयी और वजीर से कहा कि वह कैसा भी है, आखिर मेरा खून है, हमारे राज्य का भावी सम्राट है। मेरे बेटे को ढूँढ़कर लाओ।

अब ढूँढ़ते हुए एक दिन वजीर ने देखा कि वह किसी साधारण-से भोजनालय के बाहर जूठन खा रहा है और लोगों से अपनी टूटी हुई चप्पल के लिए पैसे माँग रहा है।

वजीर रथ से उतरा। पहले उसने राजकुमार को प्रणाम किया और कहा कि आप रथ में बैठें। सुनते ही राजकुमार तुरंत रथ में बैठ गया, बीस साल के बाद घटना घटी और उसको तुरंत याद आ गया कि वह राजकुमार था। अब उसके चेहरे का आभामंडल ही चमकने लग गया था। एक क्षण में घटना घट गई थी, उसको सबकुछ याद आ गया था।

अब इसको समझें - द्रष्टा-भाव में स्थित होने से आत्म-साक्षात्कार की घटना एक सेकंड में घट जाती है। कारण? वह तुम्हारे भीतर ही है जिसको तुम ढूँढ़ रहे हो, जिसको तुम भूल गए हो, बस याद आने की देरी है। याद आते ही तुम तुरंत पहुँच जाओगे और रथ में बैठ जाओगे। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

आप कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्ति योग - इन तीनों के द्वारा साक्षी स्वरूप को जान सकते हैं। यहाँ पहुँचने का मार्ग 'ध्यान' होता है और 'साक्षीत्व' मंजिल होती है।

१) 'कर्म' के साथ 'ध्यान' को जोड़कर कर्म करने वाला 'कर्मयोग' से साक्षी पर पहुँच सकता है। इसका मार्ग 'ध्यान' है।

२) 'विचार' के साथ 'ध्यान' को जोड़कर जो ध्यानपूर्वक, होशपूर्वक, विचार करता है, वह 'ज्ञानयोगी' होता है। इससे वह 'साक्षी' पर पहुँच सकता है। इसका मार्ग 'ध्यान' है।

३) 'भाव' के साथ 'ध्यान' के गठबंधन को जोड़कर जो 'भक्ति' करता है, वह 'भक्तियोग' हो जाता है। इससे वह 'साक्षी' पर पहुँच सकता है। इसका मार्ग 'ध्यान' है।

इन तीन मार्गों से आदमी 'साक्षी-स्वरूप' में पहुँच सकता है, लेकिन तीनों को उपयोग में लाने की विधि सिर्फ 'ध्यान' है।

जैसे - कोई वैद्य एक व्यक्ति को औषधि देता है कि स्वस्थ होने के लिए आपको इसे शहद, दूध, पानी में से किसी एक के साथ खानी है। इसमें मूल महत्व औषधि खाने का है। ठीक इसी तरह 'साक्षी-स्वरूप' में पहुँचने के लिए 'ध्यान' ही एकमात्र मार्ग है। व्यक्ति 'साक्षी-स्वरूप' से आत्म-साक्षात्कार को और फिर ईश्वर की अनुभूति प्राप्त कर सकता है।



जय गुरुदेव! ❤️

हमें किसी अप्रिय, प्राकृतिक या असामयिक घटना का दुःख होता है और कभी दुःख से हमारा मन बैठ जाता है। लेकिन एक समय के बाद दुःख हल्का हो जाता है, कुछ कम हो जाता है। इस दुःख को हमारी समझ ने नहीं बल्कि समय ने दूर किया है।

दूसरा - किसी ने हमें गाली दी और हमें दुःख पहुँचा। इसके बदले में हमने भी वापस उसको दो-चार गाली दे दी। अब इस क्रिया से हमारा दुःख तो दूर हो सकता है लेकिन इस क्रिया से भी हमारे अंदर कोई समझ विकसित नहीं होगी।

अब बात समझने की यह है कि किसी भी दुःख को समय से पहले और समझ के साथ दूर करने को ही 'विवेक' कहते हैं। विवेक से हम जीवन की चुनौतियों को आसानी से सुलझा सकते हैं। कारण? विवेक, ज्ञान का महत्वपूर्ण स्तम्भ है।

विवेक का जागरण 'सत्संग' से होता है, इसके लिए समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। 'सत्संग' से बुद्धि शुद्ध होती है और विवेक जागृत होता है तथा अध्यात्म, ध्यान, ज्ञान पनपता है। ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव!

एक पवित्र स्थल पर एक साधु महाराज आँखें लाल किये हुए, धुनी रमाए हुए बैठे थे। साधु महाराज को देखकर एक सज्जन व्यक्ति (जो ज्ञान का पिपासु थे) उनके पास गए और बोले - महाराज मुझे आप ज्ञान देने की कृपा करें। महाराज जी गुस्से में तमतमाते बोले - “ज्ञान! और तुझे कभी नहीं मिल सकता है! कारण तू इसके लायक ही नहीं है। तू कुछ भी नहीं कर सकता है”। “तुझे पता है कि मैंने कितनी तपस्या की है। मैं अपने बाएँ हाथ की छोटी अँगुली से इस भारी पत्थर को उठा सकता हूँ। क्या तू कर पाएगा?” वस्तुतः देखा जाए तो यह सिर्फ अभ्यास मात्र है।

अब बात समझने की है कि एक साधु लँगोट लगाये एक टाँग पर खड़ा है कि मुझे कोई देखे और एक आदमी सूट एवं टाई लगाये खड़ा है कि मुझे कोई देखे, दोनों की लँगोट में कोई फर्क नहीं है। कारण? दोनों ही स्वयं को देखने के लिए नहीं, दूसरों को दिखाने के लिए खड़े हैं।

ब्रह्म या आत्म-साक्षात्कार के लिए स्वयं को देखना होता है और उसके लिए भाव चाहिए - मैं कुछ नहीं कर रहा हूँ, मुझे कुछ नहीं चाहिये, मैं कुछ नहीं हूँ। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

रामकृष्ण परमहंस कहते थे कि जैसे तुमने चिमटे को अँगुलियों से पकड़ा और चिमटे से आग को पकड़ा, फिर चिमटे को हाथ से पकड़ा। अब बताओ कि अँगुली को किस से पकड़ोगे?

जिसकी सत्ता से अँगुली हिलाने का संकल्प होता है, वो कौन है?

जिसकी सत्ता के बिना पत्ता भी नहीं हिलता है,

उसी का नाम 'परमात्मा' है। वह, जिसके द्वारा सब जाना जाता है। वह, जिसके द्वारा सब किया जाता है। ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव!

आपका जागना तब होता है, जब आप जीवन को उसकी संपूर्णता में जीते हैं, उसे अपनाते हैं। जीवन जैसा है, उसे वैसा ही स्वीकार करते हैं।

जीवन किन्हीं जंगली पेड़-पौधों का मिश्रण है। जीवन में परेशानी तब शुरू होती है, जब आप उसमें अपने हिसाब से आकृति देकर (जैसे - गोलाकार, चौकोर, आयताकार, रूप का) सुंदर बगीचा बनाने की कोशिश करते हैं और उसे पूर्ण रूप देने की कोशिश करते हैं।

जहाँ अपने विचार लगा दिए, वहीं अटक गए और परेशानी शुरू हो गई। प्रकृति को जैसा है, वैसा स्वीकार करें।   

जय गुरुदेव!

"तुम पंचभूत नहीं हो।

न तुम पृथ्वी हो, न जल, न अग्नि, न वायु, न आकाश।

तुम चिन्मय हो - केवल चेतना, केवल बोध।"

सत्य वही है, जो काल से परे है। जो समय के साथ जन्मे और समय के साथ मिट जाए, वह सत्य कैसे होगा?

यह देह देखो - कभी दो-तीन किलो की थी, फिर पचास की हुई, सत्तर की हुई और एक दिन मिट्टी में मिल जाएगी। जिसको काल मिटा दे, वह सत्य नहीं। वह केवल एक लहर है, सागर नहीं।

अष्टावक्र ऋषि जी, राजा जनक से कहते हैं - "तुम देह नहीं हो - यह जानकर अभी शांत हो जाओ। अभी मुक्त हो जाओ"।

देरी किस बात की? जो मिटना है, वह तुम हो ही नहीं। जो सदा है, वही तुम हो। इस बोध में ठहरते ही बंधन गिर जाता है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

गति से अगति की ओर - यही ध्यान है, यही योग है।

जब मन दौड़-दौड़कर थक जाता है, विचारों की आँधी उठती है, तब उसे रोकना नहीं होता, बस लौटना होता है। मन को बाहर से भीतर मोड़ देना ही ध्यान है।

जिस क्षण तुम इसी पल, इसी साँस में उतरने को राज़ी हो जाते हो, उसी क्षण एक झरना फूट पड़ता है - आनंद का, शांति का। वह कहीं दूर नहीं, तुम्हारे भीतर ही प्रतीक्षा कर रहा है। जब प्रश्न बाहर भटकना बंद कर देते हैं और तुम्हारी ही चेतना में गिर-गिरकर विलीन होने लगते हैं, जब कोई चाह नहीं बचती, कोई दौड़ नहीं बचती, तो जान लेना कि मन अब 'अगति' में उतर रहा है, तुम 'ध्यान' में उतर गए हो। तुम 'अ-मन' हो गए हो। फिर एक ही उद्घोष बचता है - "मैं नहीं हूँ... तू ही तू है... तू ही तू है..." और इस 'तू' में 'मैं' का सारा बोझ गल जाता है। यही मुक्ति है। अभी है और यहीं है।   

जय गुरुदेव!

समुद्र की सतह पर लहरें उठती हैं, गिरती हैं, शोर मचाती हैं, पर समुद्र की गहराई में सदा शांति है, सदा स्थिरता है। लहरें समुद्र को हिला नहीं पातीं, बस ऊपर-ऊपर थिरकती रहती हैं, ठीक वैसे ही मन भी विचारों का जोड़ है। एक विचार आया और लहर उठी, तभी दूसरा विचार आया और लहर उठी। ऐसे ही सैकड़ों विचार इकट्ठे हो जाएँ, तो वही 'मन' कहलाता है। जैसे एक नीम का पेड़, नीम होता है पर सैकड़ों नीम के पेड़ से नीम-कुंज बन जाता है, पर नीम-कुंज कोई अलग वस्तु नहीं बल्कि नीम के पेड़ों का समुच्चय है, जोड़ है।

अगर तुम एक-एक नीम का पेड़ काटोगे, तो एक दिन नीम-कुंज मिट जाएगा और फिर खाली भूमि बचती है। उसी तरह अगर तुम एक-एक विचार को साक्षी होकर देख लो, उसे पकड़ो मत, उससे चिपको मत।

तो एक दिन मन भी मिट जाता है। जो बचता है, वही 'अमन' है। वही 'मौन' है। वही 'ध्यान' है। वहाँ न लहर है, न हलचल। वहाँ केवल निर्मल, शांत, स्थिर समुद्र है - वह तुम्हारा अपना स्वरूप है।

विचार हटे, तो 'मन' गया, 'मन' गया तो 'अशांति' गई। अशांति गई, तो जो शेष रहा, वही 'शिव' है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

साक्षित्व को जानने और समझने के प्रति एक अनुभव अवश्य करना चाहिए

-

"आँखें बंदकर आराम से बैठकर अपनी साँसों को देखें। आती-जाती साँस को जागरुकता और सम्मान के साथ देखते जाएँ। साँस की गति, तापमान, स्पर्श - सभी अनुभूतियों को तटस्थता से देखते रहें। सिर्फ साँस को समग्रता से देखें और कुछ न करें।

फिर धीरे-धीरे उस 'देखने वाले' को देखें। जो साँस को देख रहा है, उसे देखें। यह मुश्किल हो सकता है लेकिन यही कड़ी है, जो आपको जोड़नी है। बुद्धि कह सकती है कि 'मैं ही देख रहा हूँ, मैं ही साँस ले रहा हूँ', लेकिन ऐसा नहीं है। साँस आप नहीं लेंगे, तो भी आएगी। बस बुद्धि को छोड़ें, 'मैं कुछ नहीं कर रहा'। आप तुरंत साक्षित्व को प्राप्त हो जाएँगे। वही शिव है, वही आपका स्वरूप है। 🙏 " ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

परम् स्थिति की दो अवस्था है - एक, ध्यान और दूसरी, भक्ति।

(१) परमात्मा की तरफ़ उन्मुख होने को 'भक्ति' कहते हैं।

(२) स्वयं की तरफ़ उन्मुख होना 'अंतर्मुखी' होना और 'ध्यान' है।

ईश्वर को दो मार्गों से पाया है। बुद्ध ने 'ध्यान' से पाया है और मीरा ने 'भक्ति' से पाया है। इन दोनों ही परिस्थिति में प्रीति शुद्ध है और स्वयं का मिटना निश्चित है।

भक्ति में भक्त अपने में शून्य हो जाता है और परमात्मा पूर्ण हो जाता है। ध्यान में ध्यानी पूर्ण हो जाता है और परमात्मा शून्य हो जाता है। दोनों स्थितियों में 'पूर्णता' और 'शून्यता' का मिलन हो जाता है। मिलन होना ही मुक्ति एवं मोक्ष की दशा है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

संयम वास्तव में मन, वाणी और कर्म के सभी स्तरों पर होता है। यह आत्म-संकल्प से आता है, जो भीतर से उत्पन्न होता है। संयम को दमन से जोड़ना गलत है क्योंकि दमन बाहर से आरोपित होता है, जबकि संयम आत्मविजय की महान प्रक्रिया है। संयम का महत्व अध्यात्म-साधना में बहुत अधिक है क्योंकि यह हमें अपने मन और अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण करने में मदद करता है। जब हम संयम रखते हैं, तो हम अपने विचारों, शब्दों और कर्मों को नियंत्रित कर सकते हैं और अपने जीवन को अधिक संतुलित और शांतिपूर्ण बना सकते हैं। 😊

संयम के कुछ महत्वपूर्ण पहलू हैं -

1. **आत्म-जागरुकता:** अपने विचारों, शब्दों और कर्मों के प्रति जागरूक होना।
2. **आत्म-नियंत्रण:** अपने मन और इंद्रियों पर नियंत्रण रखना।
3. **संतुलन:** अपने जीवन में संतुलन बनाए रखना।
4. **शांति:** अपने मन और शरीर में शांति बनाए रखना।

संयम का अभ्यास करने से हम अपने जीवन को अधिक सुखी और शांतिपूर्ण बना सकते हैं। ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव! ❤️

स्वयं का प्रकृति के साथ एकाकार होना ही शिव होना है। कारण? शिव प्रकृति स्वरूपा है। हमारा एवं शिव का प्रेममय होना वास्तविक एवं प्राकृतिक स्वभाव है, जो सबमें समान रूप से विद्यमान रहता है। हमारा इस विषय को विवेकपूर्ण स्वीकार करना शिव के साथ एकाकार होना है। जैसे नीम के पेड़ में तना, शाखाएँ, पत्तियाँ भिन्न हो सकती हैं लेकिन कड़वा होना उसका स्वभाव है, वैसे ही प्रेम का स्वभाव सर्वत्र एक है।

जब 'मैं' का प्रेम में विलय होता है, तो व्यक्ति शिव हो जाता है, प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण - एक अनन्त और अखण्ड प्रेम बन जाता है। सत्यं शिवम् सुंदरम्! 🙏❤️

जय गुरुदेव!

दुनिया में दो प्रकार के लोग होते हैं - एक, जो चीजों पर विश्वास करके मान लेते हैं और दूसरे, जो पहले जानते हैं फिर विश्वास करते हैं।

पहली अवस्था: जैसे पृथ्वी, सूर्य के चारों तरफ चक्कर लगाती है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है लेकिन इसे हम सीधे तौर पर इसे जान नहीं सकते हैं। हमें इसे वैज्ञानिकों के शोध और प्रमाणों के आधार पर सत्य मानना पड़ता है।

दूसरी अवस्था:- जैसे किसी डॉक्टर को बीमारी के बारे में बताने से पहले हम डॉक्टर के बारे में जानकारी हासिल करते हैं।

पुराणों में आध्यात्मिकता के बारे में श्रुति और स्मृति के बारे में यह माना जाता है कि कुछ चीजें हमें जाननी चाहिए और कुछ चीजें हमें माननी चाहिए। 'श्रुति' और 'स्मृति' इसी बात को दर्शाती हैं। श्रुति वह है, जो हमें सीधे तौर पर अनुभव होती है, जैसे कि आत्मा का अस्तित्व। स्मृति वह है, जो हमें अपने पूर्वजों से मिली हुई है, जैसे कि वेद और उपनिषद्। आध्यात्मिकता में यह माना जाता है कि हमें दोनों का ही सम्मान करना चाहिए। हमें श्रुति के आधार पर अपने अनुभवों को मजबूत करना चाहिए और स्मृति के आधार पर अपने पूर्वजों के ज्ञान और अनुभवों को सम्मान देना चाहिए। आध्यात्मिकता में यह बिल्कुल सत्य होता है कि कुछ जान के चलो और कुछ मान के चलो। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

भगवान् श्री कृष्ण ने गीता में कहा है - "भवतः अपेक्षया उत्तमः भागीदारः नास्ति"। इसका हिंदी में अर्थ है - "आपसे बढ़कर कोई और आपका साथी नहीं है" या यूँ कहें कि हम खुद ही अपने सबसे अच्छे दोस्त और भागीदार हैं।

इसका मतलब है कि हम खुद को सबसे अच्छी तरह समझते हैं और अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। हम अपनी ज़रूरतों और क्षमताओं को सबसे अच्छी तरह जानते हैं। स्वयं के साथ सहयोग करके हम अपने जीवन में सफलता और खुशी प्राप्त कर सकते हैं।



जय गुरुदेव!

आकाश को छूने वाले लंबे और घने पेड़ कभी भी छोटी झाड़ियों को, छोटे पेड़ों को देख-देखकर इतराते नहीं हैं। कारण? जो प्रकृति उनको बड़ा बनाती है, छोटा भी वही प्रकृति बनाती है।

एक आदमी किसी काम में कुशल या प्रवीण है और एक दूसरा आदमी उसी काम में अकुशल या अप्रवीण है।

इन दोनों का स्वभाव इनकी योग्यता होता है, इनका पद या डिग्री इनका स्वभाव नहीं होता है। ऐसा समझने से हमारे विचारों में टकराव की स्थिति पैदा नहीं होती है।

“योग्यता या अयोग्यता को आत्म-स्वीकृति और विनम्रता से स्वीकार करने पर हम दूसरों के प्रति बेहतर तरीके से व्यवहार कर सकते हैं।” ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव!

हमने स्वप्न में मरने का सपना देखा और उससे हमें खतरा होने लग गया। स्वप्न से जागते ही झूठे सपने से हम निवृत्त हो गए, लेकिन जागने के बाद इस जगत में समय के साथ मरने का खतरा बढ़ गया। अब इस लगातार मरने के खतरे से हमें कौन जगाए! स्वप्न से तो माँ ने और पत्नी ने, दोनों ने जगाया है।

एक दूसरा जागना है, वही सत्य है, जिसको अध्यात्म 'एक ओंकार', 'एक परमात्मा' कहता है। इस प्रकार कोई विरला नर और संत ही जागता है। एक राजा स्वप्न में एक बार भिखारी हो गया, लेकिन स्वप्न से जागते ही वह फिर से राजा हो गया। कारण? स्वप्न से पहले वह राजा ही था और स्वप्न में राजा का कुछ भी लुटा-पिटा नहीं था। लेकिन असलियत में आध्यात्म जागृत होने के बाद वह राजा बनेगा, तब उसे ब्रह्मज्ञान मिल गया होगा। ऐसी परिस्थिति में वह स्वप्न और जागृत, दोनों अवस्था में राजा ही रहेगा, जिसका कभी कुछ भी लुट-पिट नहीं सकता है। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

ध्यान लगाने से झूठ गिर जाता है, सच्चाई का अवतरण हो जाता है। जैसे - आज कुछ अच्छा हुआ है, तो संतुष्टि हो गई; कल कुछ छिन गया, तो दुःख हो गया; आज प्रशंसा मिली, तो शांति हो गई और कल उपेक्षा मिली, तो बेचैनी हो गई है। पर ध्यान स्थायी भाव और स्थिरता से जोड़ता है। ध्यान में हम कुछ पाते नहीं हैं, हम वो बन जाते हैं, जो हम वास्तव में हैं।

न मैं शरीर हूँ, न मैं मन हूँ, मैं एक 'मौन चेतना' हूँ। ध्यान कोई रास्ता नहीं है जो कहीं ले जाएगा, ध्यान वह दशा है जिसमें तुम कहीं जाते नहीं हो, ध्यान से सबकुछ तुम्हारे भीतर प्रकट हो जाता है। ध्यान वह पथ है जिससे हम अकारण ही आनंद और शांति से जुड़ते हैं। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

जीवन में कुछ समय निकालकर बहुत साधारण चीजें या कार्य करें जो कि कभी-कभी महत्वहीन लगती हैं। उदाहरण के तौर पर, तारों को देखना, पक्षियों को देखना, सूर्योदय या सूर्यास्त देखना, टहलना, पेड़-पौधों को देखना, तालाब या नदी के किनारों को देखना, चुपचाप अपनी साँसों का अवलोकन करना आदि। यह सभी कार्य तुम्हें स्वयं की ओर आकर्षित करते हैं और तुम्हें स्वयं का दर्शन कराते हैं कि 'मैं कौन हूँ'। ❤️💛

जय गुरुदेव!

अकेले रहने से अकेलापन नहीं होता, अलग रहने से होता है। अब इसको इस प्रकार समझें-

आप परिवार से या भीड़ से अकेले रहने के लिए पहाड़ों पर रहने चले गए लेकिन अगर आपके मन-मस्तिष्क में परिवार या भीड़ पहले की तरह भरी हुई है, तो यह आपका अकेलापन नहीं है। कारण? अपने मन में विचारों के बोझ को, भीड़ को वैसे ही ढोते रहे हो। अकेलेपन के लिए आपको मन, विचारों से असंग होना पड़ेगा, पृथक होना पड़ेगा और आपको इसके लिए कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है, यह आप भीड़ में रहकर, समाज के बीच रहकर, परिवार के सदस्यों के साथ रहकर भी कर सकते हैं, इसको ही 'योग' कहते हैं, इसको 'ध्यान' कहते हैं। ध्यान का मतलब विचारों, भावनाओं, परिस्थितियों से भागना नहीं होता है, उनको गले लगाना होता है। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

किसी व्यक्ति, संस्था, समाज को बिना जाने अपनाने से या उसपर अटूट विश्वास करना कि इससे मेरे जीवन का मार्ग प्रशस्त होगा और इसमें मेरी भलाई है, उसको 'श्रद्धा' कहते हैं। इसलिए हमारे ग्रंथों में कहा गया है - "श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्" ।

ऐसा विश्वास होना कि उनके द्वारा, हमारे प्रति ऐसी कोई घटना नहीं होगी जिससे हमारी सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है, ऐसा अटूट विश्वास होना श्रद्धा का प्रतीक है या फिर ऐसे कहें कि जिनके पास जाकर हम स्वयं को छोड़ देते हैं कि अब तू ही जाने, मैं कुछ नहीं जानता हूँ, हम स्वयं अपनी तरफ़ से सुरक्षा के सब उपाय छोड़ देते हैं। उदाहरणस्वरूप, ऐसी श्रद्धा गुरु या ईश्वर के प्रति हो सकती है ।



जय गुरुदेव!

विकल्प का अर्थ है कि किसी वस्तु, व्यक्ति या अवस्था में एक चुनाव करना होता है। संकल्प का अर्थ किसी विशिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किया गया कार्य होता है। एक निर्विकल्प अवस्था होती है, जिसमें संकल्प और विकल्प दोनों का अभाव होता है।

निर्विकल्प अवस्था में व्यक्ति प्राकृतिक प्रवाह में होता है, वहीं निर्विकल्प अवस्था व्यक्ति को विकल्पों के तनाव और संघर्ष से मुक्त करती है और उसे अपने जीवन को नए दृष्टिकोण से देखने में मदद करती है।

निर्विकल्पता एक उच्च आध्यात्मिक अवस्था है, जिसमें व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित होता है कि मैं कौन हूँ। यहाँ वह विकल्प और संकल्प से मुक्त होता है।

संकल्प और विकल्प से परे की स्थिति ही 'शिव अवस्था' है। जो शिव पूजा निर्विकल्प अवस्था में फलित होती है, वही ध्यान की अवस्था है। 🌺❤️🙏

जय गुरुदेव!

एक - जिसके ऊपर तुम अपना स्वामित्व समझते हो, प्रायः उसके प्रति तुम्हारा सम्मान नहीं रहता है। दूसरा - जिससे हम कुछ हासिल कर लेते हैं उसके प्रति हमारा आदर और सम्मान कुछ कम हो जाता है।

तीसरा - तुम जिसका आदर या सम्मान करते हो, वह तुमसे बड़ा हो जाता है, यह हमसे अनजाने में ही होता है।

जब तुम अपने सभी संबंधों के प्रति सम्मान करते हो, तब तुम्हारी अपनी चेतना का विस्तार होता है। तुम्हें जो कुछ भी इस संसार में मिला है, अगर उसके प्रति सम्मान करते हो तब तुम लोभ, ईर्ष्या और कामवासना से मुक्त हो जाते हो। इसलिए हर पल अपने भीतर सम्मान और आदर का भाव रखने से हम सुखी और प्रसन्न रह सकते हैं। 🙏🌸❤

जय गुरुदेव!

मकान में प्रवेश तो दरवाजे से ही होता है और दरवाजा वहाँ होता है, जहाँ शून्यता होती है। अगर दरवाजे की जगह दीवार होती, तो हमारा प्रवेश नहीं हो सकता। जहाँ दरवाजा बना है, वह जगह खाली होने से हमें वहाँ से प्रवेश मिलता है, यही जीवन का सत्य है।

आध्यात्मिकता के पथ पर चलने के लिए जब तक हम मन और वासनाओं को छोड़कर खाली नहीं हो जाते, तब तक दरवाजे के पार जाना मुश्किल है क्योंकि अहंकार और माया की दीवारें हमें रोकती हैं। हमें स्वयं को शून्य बनाना होगा, तभी प्रभु के मकान में प्रवेश मिल सकता है और तभी हम अपने असली स्वरूप को जान सकते हैं। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

गुरु शक्ति है, गुरु सिद्धांत है, गुरु कोई व्यक्ति नहीं, गुरु एक ऊर्जा है जो सृजन करती है, जो बनाए रखती है और परिवर्तन लाती है। यही गुरु की शक्ति है, जो ब्रह्मा, विष्णु और महेश के रूप में प्रकट होती है। यह आपसे अलग नहीं है, आपसे दूर नहीं है। वह आपका अपना है, इसलिए उसे महसूस करो, जैसे आप साँस को महसूस करते हैं, जैसे आप अपने दिल की धड़कन को महसूस करते हैं।

गुरु हमें सभी दुखों से मुक्ति दिलाता है, खुशी की लहर दौड़ाता है, ज्ञान का उदय करता है और प्रतिभाएँ खिलाता है। ये सभी गुण गुरु की उपस्थिति में ही होते हैं, जो असीमित और अनंत है, जो हर पल हमारे साथ है और हमें जीवन के सही मार्ग पर ले जाता है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

*उपनिषद् कहते हैं कि 'जगत् अनित्य है'। यह क्षण-क्षण बदलता है।

तुम्हारा शरीर कोई ठहरा हुआ पत्थर नहीं है, यह बहती हुई सरिता है जो कि पल-पल प्रवाह में है। विज्ञान भी मान्यता देता है कि हर सात साल में तुम पूरी तरह नए हो जाते हो और तुम्हारा रोम-रोम बदल जाता है। तुम नाखून, बाल, मल-मूत्र के रूप में हर दिन अपना अतीत बहा देते हो। यही सत्य है। यही जीवन का अटल सत्य और निर्मम नियम है।

सृष्टि का कण-कण बदल रहा है लेकिन हम सुख को, प्रेम को, शांति को जकड़कर हमेशा अपने साथ रखना चाहते हैं। जो बदल रहा है उसको थामने की ज़िद है, वस्तुतः यही दुःख की जड़ है। सुख मुस्कुराया है, तो दुःख उसकी पीठ पर बैठा है, यह सृष्टि का अटूट नियम है। सिक्का उछला नहीं कि उसके दोनों पहलू साथ आयेंगे, एक को चुनोगे, दूसरा अपने आप साथ चला आएगा। इसे जान लो, स्वीकार कर लो, तब तुम मुक्त हो। प्रवाह से लड़ना बंद करो, प्रवाह बन जाओ। यही शिवत्व है। यही बोध है।



जय गुरुदेव!

हम भावनाओं के साथ जन्म लेते हैं लेकिन हमारी बुद्धि सिर्फ औज़ार का काम करती है। वह जोड़ती है, घटाती है, गुणा-भाग करती है, चीज़ों को तोड़कर निष्कर्ष परोस देती है। बुद्धि के अंदर भावना जान डालती है। हमारी भावना में पूरी जन्म-कुंडली होती है - करोड़ों विचार, अनगिनत अनुभव, जन्मों-जन्मों के संस्कार होते हैं। बुद्धि ड्राइवर होती है, तो भावना उसकी दिशा होती है।

अगर भावना शुद्ध है, पवित्र है तो वही बुद्धि अमृत बरसाती है, उसका हर निर्णय स्वयं एवं समाज को रोशन कर देता है। अगर भावना में ज़हर घुल गया, उसमें दुर्भावना बैठ गई तो वही बुद्धि विध्वंसक बन जाती है। बुद्धि को नहीं, भावना को शुद्ध करो, यह उसी तरह है, जैसे ऋषि के हाथ में धर्म-ध्वजा है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

उपनिषद् कहते हैं कि अहंकार स्व-निर्मित है और वह गैर-ज़रूरी है। सच तो यह है कि बिना अहंकार के ही गहनता में जिया जा सकता है। एक अहंकारी व्यक्ति निम्न स्तर की सतह पर जीता है, जहाँ उसकी दृष्टि दूसरों की आँखों में बनी छवि पर टिकी रहती है। जंगल में कोई भी नहीं होता, वहाँ अहंकार का कोई काम नहीं होता। कारण? अहंकार तो सामने वाले की आँख में दर्पण की तरह छवि बनाता है, तभी पैदा होता है।

गहरे जीवन में वही उतरता है, जो आत्मा में उतरता है और आत्मा में वही उतरता है, जो अहंकार को भूलता है। जो दूसरे की आँख में देखना भूलकर-अपनी आँख के भीतर देखता है, जो स्वयं के बारे में- दूसरों के विचारों का खयाल छोड़ता है, वही आत्मा में उतरता है और वही जीवन की गहनता को जान पाता है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

बुद्ध ने विपश्यना ध्यान का बताया - श्वास के तुम साक्षी हो जाओ। श्वास को देखते जाओ, बस काफ़ी है। श्वास भीतर आयी, बाहर गई, इसको देखते रहो, कुछ मत करो, बस सहजता से श्वास का भीतर आना और बाहर जाना देखते रहो।

श्वास एक सहजतम प्रक्रिया है, , जो अपने आप होती रहती है। श्वास को स्वयं चलने दो, उसको चलाने में भी भागीदार मत बनो, जैसे चल रही है, बस श्वास को देखते रहो, सुनते रहो, भीतर आना, बाहर जाना देखते रहो। कुछ ही देर बाद तुम चकित हो जाओगे, लगेगा कि तुम ही सबकुछ हो, तुम्हारे अंदर ही सबकुछ है।   

जय गुरुदेव!

अगर हम किसी खूबसूरत वस्तु को छूने या स्पर्श का आनंद लेना चाहते हैं, तो हाथ में चमड़े का दस्ताना पहनकर क्या हम उस वस्तु की सुंदरता या स्पर्श का अनुभव और आनंद ले पायेंगे? बिल्कुल भी नहीं! ठीक उसी तरह, हमें ब्रह्म से, ईश्वर से, आत्मा से, परमेश्वर से मिलने के आनंद का अनुभव करने के लिए इस देह रूपी आवरण, बुद्धि रूपी परत, अभिमान रूपी दीवार और मन रूपी माया को त्यागना ही पड़ेगा, जो हमने पहन रखा है। तभी हमें ईश्वर के स्पर्श का आनंद मिल पाएगा, हम परमात्मा से मिलन का अनुभव ले सकेंगे। यह सिर्फ ध्यान और होश से ही संभव है, जो हमें अपने असली स्वरूप को जानने की दिशा में ले जाता है। ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव!

🙏 सेवा करने से प्रेम का अनुभव होता है और इस प्रकार प्रेम को जाना जा सकता है - यह एक ऐसा सत्य है जो हमारे हृदय को खोल देता है। इस प्रकार प्रेम का अनुभव होने से यह मार्ग हमें ईश्वर की ओर ले जाता है।

🙏 मुस्कराहट के साथ रहने से आनंद का अनुभव होता है और इस प्रकार आनंद को जाना जा सकता है। हम जब आनंद को महसूस करते हैं, तब जीवन के वास्तविक अर्थ को समझते हैं और यह मार्ग हमें ईश्वर की तरफ़ ले जाने में मदद करता है।

🙏 ध्यान करने से मन शांत रहता है और इस प्रकार शांत मन के बारे में जाना जा सकता है। जब हम मन को शांत करते हैं, तब इसी मार्ग से हमें शांति और ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव होता है।

🙏 सचेतन या होश के साथ हर पल जीने से हमें ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव होता है। जब हम सचेतन होते हैं, तो हम अपने भीतर के ईश्वर को महसूस करते हैं और यही अनुभव हमें जीवन के वास्तविक अर्थ को समझने में मदद करता है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

ईश्वर शून्य है! कैसे?

हमारे लिए ईश्वर को शून्य मानना ही अच्छा है। वह अरूप है। वह निराकार है। वह निरंजन है। वह निर्लिप्त है। हमारे उपनिषद् में ऋषियों ने ईश्वर को 'शून्य' माना है, जैसे - वृक्ष के बीज को तुम तोड़ो, उसको पीस डालो पर उसमें वृक्ष कहीं छिपा हुआ नहीं मिलेगा, फिर भी इसी बीज से वृक्ष पैदा होता है। वृक्ष कहाँ छिपा है? वृक्ष कहाँ से आता है? वह शून्य से ही आता है!

बीज में जो वृक्ष का नक्शा छिपा हुआ है, वह दिखाई नहीं देता। कारण? वह शून्य से ही आता है। प्रकृति की गोद में बसी हुई हर एक चीज़ शून्य से आती है। सच्चाई तो यह है कि प्रकृति ही ईश्वर का प्रतीक है। 🙏❤️🌺

जय गुरुदेव!

आप जब किसी चीज को देखने में लग जाते हैं, तो आप दृश्य में उलझ गए और आपकी दृष्टि जब दृश्य से हटकर स्वयं पर पड़ी, तो आप द्रष्टा हो गए। यह वैसा ही है, जैसे सिनेमा हाल में बैठकर आप स्वयं दृश्य हो जाते हो। कारण? पर्दे से नजर हटती ही नहीं है। आप वहाँ पर अपनी बीमारी भूल गए, छोटा-मोटा दुःख भूल गए, अपने को ही भूल गए कि मैं कौन हूँ। आपके सामने जो दृश्य चल रहा है, उसमें अटक गये और आप दर्शक बन गए। लेकिन जैसे ही दृष्टि स्वयं पर टिकती है और अपने अंदर देखा कि द्रष्टा हो गए और आसपास के सारे दृश्य खाली हो गए, पर्दा खाली हो गया, सारे दृश्य बिदा हो गए। अब सिर्फ़ देखने वाला बचा। तब दुबकी स्वयं में लगती है।

आत्मा ही परमात्मा बन जाती है। घटना घट गई और तुम बुद्ध बन गए। तुम्हें दृश्य और दर्शक से मुक्ति मिल गई। कारण? इस संसार में दृश्य और दर्शक अनेक हैं, लेकिन द्रष्टा सब जगह एक ही है। यह वैसा ही है, जैसे पूर्णिमा का चाँद तुम्हें नदी में, तालाब में, नाले में, पोखर में, समुद्र में, सभी जगह एक जैसा ही दिखाई देता है। 🙏❤

जय गुरुदेव!

मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के उत्तम उपाय

1. जीवन में आपने पहले भी समस्याओं का सामना किया है। याद रखें कि यह पहली बार नहीं है कि आप किसी समस्या का सामना कर रहे हैं और आप उससे निकल भी चुके हैं। अपने उस पहले के अनुभव से सीखें और आप इससे भी उबर जाएंगे।
2. सकारात्मकता को थाम कर रखें कि जब हमें काफी तारीफ़ भी मिलती है और एक बार अपमान मिलता है, तो हम उस अपमान को पकड़कर रख लेते हैं। हमें खुद को ढालने की और यह स्वीकार करने की ज़रूरत है कि जब हमारे रास्ते में काफ़ी सकारात्मक चीज़ें आयेंगी, तो एक नकारात्मक चीज़ भी हो सकती है।
3. करुणा को सक्रिय रखें। कारण? देने में बहुत आनंद है। अगर आप करुणा करने की तरफ़ बढ़ते हैं, तो उससे आपको जो अभिव्यक्ति मिलेगी उससे बहुत अच्छा लगेगा।
4. वर्तमान अवस्था में जीना सीखें। कारण? हमारा मन अतीत और भविष्य के बीच झूलता रहता है और हम अतीत का रोना रोते हैं या भविष्य को लेकर चिंतित हो जाते हैं, जबकि आनंद और खुशी वर्तमान क्षण में पाई जा सकती है।

जय गुरुदेव!

चार चीजें हैं, जो हमारे जीवन को प्रभावित करती हैं:

1. अनाज (खाना) - ज्यादा खा लेने से हम पचा नहीं सकते और वह अपचा हो सकता है। उससे हम बीमार हो सकते हैं।
2. पानी - अगर हम ज्यादा गर्म, ज्यादा ठंडा या गंदा पानी पी लेते हैं, तो हमारी तबीयत खराब हो सकती है।
3. वायु - शुद्ध हवा न मिलने से हम बीमार हो सकते हैं।
4. मानसिक प्रभाव - अगर हम होश में नहीं हैं, तो किसी अप्रिय सुनने के प्रभाव से मानसिक बीमार हो जाते हैं। जैसे - किसी ने गाली दे दी और उसका प्रभाव हमारे मन की खुराक बन गया। कारण? उसको हम पचा नहीं पाए और वह हमारे शरीर में पड़ी रहकर नासूर बन जाएगी।

समझना यह है कि जिसको अपने विचारों को समझकर पचाना आ गया है, समझो कि वह मुक्त हो गया है।

जिसने विचारों को पचाना सीख लिया, उसने जीवन को जीना सीख लिया।



जय गुरुदेव!

"जब कोई आदमी किसी जानकारी से अनभिज्ञ होता है या उस विषय का ज्ञान नहीं रखता या वह उस कार्य में कुशल नहीं है, तो ऐसी स्थिति में हमारे मन में उसके प्रति करुणा का भाव प्रकट होना चाहिए। इस प्रकार का व्यवहार करके हम उसका भला ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि अपने मन को भी शांत और स्थिर रख रहे हैं। यह हमारे जीवन का एक बड़ा लाभ है क्योंकि हम अपने मन को विचलित होने से बचाते हैं और अपने आप को संभालने में सफल होते हैं।

यह सफल जीवन का एक महत्वपूर्ण रहस्य है, जो हमें शांति-सुख और संतोष की ओर ले जाता है और हमारे जीवन को एक नए अर्थ और उद्देश्य से भर देता है। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

"हम अगर खिड़की से आकाश को देखें, तो चौकोर आकाश दिखाई देगा और उसी आकाश को खुले में देखें, तो ऐसा लगेगा कि पृथ्वी और आकाश मिल रहे हैं। हवाई जहाज़ से भी वैसा ही दिखाई देता है। कहने का तात्पर्य - जैसी दृष्टि, वैसी सृष्टि!

हम अपनी दृष्टि को, अपनी श्रवण-क्षमता को, अपनी स्पर्श-क्षमता को, अपनी स्वाद-क्षमता को छोड़कर अपने अंदर के आकाश को देखें, तो वहाँ अंतहीन आकाश है। वहाँ कोई क्षितिज नहीं है। वही पूर्ण ब्रह्म है, वही सच्चिदानंद स्वरूप है। यह श्रद्धा से अज्ञात में उतरने से संभव हो सकता है, जहाँ हमारी सीमाएँ समाप्त होती हैं और अनंत की शुरुआत होती है।"



जय गुरुदेव!

दरवाजा एक ही होता है, अंदर जाने के लिए भी और बाहर आने के लिए भी। दरवाजे के अंदर 'बाहर' लिखा होता है और बाहर 'अंदर' लिखा होता है। ठीक इसी तरह, हमारी आँखें भी एक दरवाज़ा हैं, जिसके लिए ऊर्जा का अंदर-बाहर का यही सिद्धांत है।

जब आँखें प्रेम और सकारात्मकता देखती हैं, तो ऊर्जा शरीर में प्रवेश करती है और जब क्रोध और नकारात्मकता देखती हैं, तो ऊर्जा बाहर निकल जाती है। जैसे पौधे में फूल का खिलना और पेड़ पर फल का आना उसके ऊर्जात्मक आनंद का प्रतीक है, वैसे ही सृष्टि में ऊर्जा का काम 'फलना-फूलना' होता है और एक ऊर्जावान शरीर में ही आत्मा का आनंद प्रकट होता है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

उपनिषद् कहते हैं कि जब सूर्य उदय हुआ और प्रकाश फैल गया, फिर रात आई और अंधकार फैल गया। आकाश दोनों को एक साथ जानता है और उन्हें देख भी रहा है तथा दोनों का साक्षी बना हुआ है।

आकाश यह नहीं कहता कि मैं प्रकाश हूँ। यह भी नहीं कहता कि मैं अंधकार हूँ। प्रकाश और अंधकार आकाश में आते-जाते रहते हैं, वे न भाव से बंधे, न अभाव से; न आसक्ति से बंधे, न विरक्ति से, न भोग से बंधे, न त्याग से। दोनों में किसी के भी प्रति पक्ष या विपक्ष का भाव न रखें, आकाश भाव की तरह रहें - न पक्ष में खड़े रहें, न विपक्ष में खड़े रहें। ऐसे साक्षी-भाव की स्थिति को 'समाधि' कहते हैं। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

ऊर्जा का स्वभाव इस प्रकार है कि जैसे एक बर्फ का टुकड़ा ठोस होता है वह एक जगह पड़ा है, लेकिन पिघलते ही पानी होकर बहने लग जाता है। यह ध्यान रहे कि वह पानी होकर नीचे की तरफ ही बहता है। अगर पानी भाप बनकर हल्का हो जाता है, तो वह ऊपर की तरफ उठता है।

क्रोध का मतलब ठोस ऊर्जा होती है, वह नीचे की तरफ जाती है। प्रेम यानि बहती हुई ऊर्जा है, वह हल्की ऊर्जा होती है, तो वह ऊपर की ओर उठती है। वही प्रार्थना होती है। कारण? प्रार्थना के लिए हल्का होना होता है। जैसे - मैं कुछ भी नहीं हूँ।

यही भाप बनना है। यही 'ध्यान' है। यही 'आत्मज्ञान' है।   

जय गुरुदेव!

इच्छा का मतलब कल पूरा होना होता है। कारण? इच्छा उसको कहते हैं, जो आने वाले कल में पूरी होगी या कुछ समय बाद पूरा होती है और खुशी का मतलब होता है कि अभी इस वक्त आपके पास होती है, वह कभी भी कल, परसों पर या कुछ समय बाद नहीं होती है।

अब समझना यह है कि इच्छा आपकी कल पूरी होगी तभी आप कल खुश होंगे और आपको यह पता भी नहीं होता है कि कल पूरी हो भी सकती है या नहीं भी हो सकती है। हमने अगर इच्छा के साथ खुशी को जोड़ दिया, तो हम कभी खुश नहीं रह पाएँगे।

इच्छा रखना या होना कोई बुरी बात नहीं है लेकिन इच्छा को खुशी के साथ बाँधना ग़लत है, कि मेरी सुविधा के अनुसार व्यवस्था होगी तब मैं खुश रह पाऊँगा।

अगर इच्छा को हम समर्पण कर देते हैं, तो हम हर पल खुश रह सकते हैं। कारण? खुशी हमेशा भविष्य में नहीं, वर्तमान में होती है। ❤️💛😌

जय गुरुदेव!

वैराग्य यदि किसी घटना से जन्मा है, तो वह सत्य नहीं - केवल प्रतिक्रिया है।

जो वैराग्य दुःख, हार, या छिन जाने से उठता है, उसकी जड़ में अभी भी मोह ही साँस ले रहा होता है। परिस्थिति बदल जाए, तो वैराग्य भी मिट जाता है।

“सत्य’ वैराग्य घटना से नहीं – ‘बोध’ से जन्मता है” और जहाँ बोध नहीं, वहाँ संन्यास भी केवल छिपा हुआ संसार होता है। वैराग्य होने से जीवन का सच्चा आनंद और सभी सुखों की प्राप्ति होती है।

आदि शंकराचार्य ने कहा था - “कस्य सुखम् न करोति विरागः”, अर्थात्, ऐसा कौन-सा सुख है, जो वैराग्य नहीं दे सकता है।   

जय गुरुदेव!

एक आदमी ने संत जी से पूछा कि ईश्वर के होने का क्या प्रमाण है, तो संत जी ने कहा, "मैं हूँ, क्योंकि ईश्वर है"। यह एक ऐसा कथन है जो हमें ईश्वर की उपस्थिति की गहराई में ले जाता है। संत जी का कहना है कि ईश्वर की उपस्थिति इतनी निकट है कि हम उसके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकते।

ईश्वर के साथ हमारा फासला नहीं है, वह हमारे भीतर और बाहर हर जगह है। अगर ईश्वर के साथ हमारा थोड़ा-सा भी फासला होता, तो हमारा जागना और सोना भी नहीं हो सकता था क्योंकि एक निद्रा होती है, जिसमें हम अपने शरीर और मन को आराम देते हैं, और दूसरी चिरनिद्रा होती है, जिसमें हम अपने आत्मा को अनुभव करते हैं।

ईश्वर के होने का मतलब सिर्फ इतना ही है कि वह हमारे जीवन का आधार है, हमारी श्वास है, हमारा अस्तित्व है। वह हमें जीवन देता है, हमें शक्ति देता है और हमें सच्चाई की ओर ले जाता है। ईश्वर के होने का प्रमाण हमारा अपना अस्तित्व है, हमारा अपना जीवन है। जब हम अपने भीतर देखते हैं, तो पाते हैं कि ईश्वर की उपस्थिति हर जगह है और वह हमें हर क्षण समर्थन दे रहा है। 🙏❤️❤️

जय गुरुदेव!

जब हम अपनी भावनाओं के बारे में ज्यादा चिंता नहीं करते, तो हम ज्ञान में स्थापित हो जाते हैं। ज्ञान में स्थापित होते ही आप स्वयं के साथ एक हो जाते हैं। इससे आपको पता चलता है कि शांति, आनंद और प्रेम आप ही हैं।

आत्मा ही शक्ति है। आपको भावनाएँ बहुत कमज़ोर या बहुत मज़बूत बना सकती हैं। जब आपकी भावनाएँ सकारात्मक होती हैं, तब आप सत्य के प्रति सजग होते हैं। भावनाएँ आपको सूक्ष्म, कोमल, दयालु बनाती हैं तथा आपको गहरे ध्यान में ले जाती हैं। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति - ये तीन पड़ाव हैं। यह तुम नहीं हो, तुम तो वह यात्री हो जो इन तीनों से गुजरता है। मनुष्य एक समय में एक ही स्टेशन पर रुकता है।

जागकर सोचता है - "मैं जाग गया हूँ"।

सोकर सोचता है - "मैं सो गया हूँ"।

स्वप्न में सोचता है - "मैं सपना देख रहा हूँ"।

और इसी भ्रम में बंध जाता है कि 'मैं यह स्टेशन हूँ'। पर उपनिषद् के ऋषि पुकारते हैं - "ठहरो, तुम स्टेशन नहीं हो, तुम यात्री हो"।

जागरण आया, तुमने उसे देखा और वह चला गया। स्वप्न आया, तुमने उसे जाना और वह भी बह गया। गहरी नींद आई, तुम वहाँ भी थे - खाली, मौन, पर थे!

जिस दिन तुम इन तीनों को एक साक्षी की तरह देख लेते हो कि ये दशाएँ मुझमें आती-जाती हैं, मैं इनमें आता-जाता नहीं हूँ, उसी दिन चौथा द्वार खुलता है, उसे ही 'उपनिषद् तुरीय' कहते हैं। न जागना, न सोना, न सपना - केवल बोध, केवल वह जो सदा है, जो कभी स्टेशन पर उतरता ही नहीं।

जागरण को स्टेशन जान लो, तो यात्री की याद आ जाएगी और यात्री को जान लिया, तो घर दूर नहीं। तुम घर को सदा के लिए पहुँच गए हो।



जय गुरुदेव!

जो देख रहे हो - बस उसी को देखो, आँखें कहीं और न भटकें। रंग-रूप, आकार, सब उसी पल में समा जाए। जो सुन रहे हो - बस उसी को सुनो, कानों में शब्द के साथ-साथ उसकी गूँज भी उतर जाए, मन कहीं और की बात न करने लगे। जो खा रहे हो - बस उसी को खाओ, स्वाद, गंध, स्पर्श, खाने के हर कौर में पूरा जीवन उतर आए, कहीं और का खयाल न आए, यही 'शत् प्रतिशत होना' है।

जब तुम जो कर रहे हो, उसमें पूरा का पूरा उतर जाते हो, तब मन के लिए दूसरे विचारों के लिए जगह ही नहीं बचती है क्योंकि मन एक समय में एक ही जगह टिक सकता है। या तो वह अतीत में भटकता है या भविष्य में या फिर वो वर्तमान में ठहर जाता है। वर्तमान में ठहरना ही शांति है।

वही स्थिरता है। वही मौन है और उसी मौन में सच्चिदानंद प्रकट होता है।

सत् = जो शाश्वत है।

चित् = जो जागरूक है।

आनंद = जो स्वाभाविक है।

तुम किसी खास जगह पर बैठकर नहीं, बल्कि किसी भी कर्म को पूरा होश के साथ करके ही सच्चिदानंद को जान सकते हो। कर्म बदलने से कुछ नहीं होगा, होश बदलने से सब बदल जाएगा। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

विचार, आनंद को जानता ही नहीं है। विचार स्वयं दुःख है, वेदना है। मनुष्य के लिए एक ही उपाय है - विचार के पार चला जाए!

प्रकृति के करीब जाकर आप निर्विचार हो सकते हैं। प्राकृतिक होने के लिए बेघर होने की जरूरत नहीं है। आप घर में भी प्राकृतिक हो सकते हैं। प्राकृतिक होते ही भौतिकता से ऊपर उठ जाते हैं तथा स्वयं के करीब आ जाते हैं। हम ध्यान में, समाधि में, प्रकृति के साथ एक हो जाते हैं, । जहाँ विचार खो जाते हैं, वहाँ हम स्वयं के करीब आ जाते हैं। वहीं आनंद और सुख है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

जन्म के समय बच्चा कोमल, नाजुक, मस्त, कमज़ोर होता है - न कोई भार, न कोई अहंकार होता है, केवल खेल, हँसी और बस वर्तमान में उपस्थिति रहती है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, वैसे-वैसे सख्त और दृढ़ होता जाता है। मन में दीवारें, विचारों का कवच, 'मैं' की परतें, जितनी सख्त हों, वह उतना ही अजेय लगता है। परंतु यही सख्ती उसे जीवन से दूर ले जाती है। प्रकृति भी यही गवाही देती है कि पेड़ जब तक जीवित होता है, उसकी डाली नरम है, लचीली है। हवा के साथ झुकती है, तूफ़ान में टूटती नहीं है, पर जैसे ही वो डाली से टूटती है - वैसे ही सख्त हो जाती है। सख्त होना ही मरने की तरफ बढ़ना है।*

विचार, चिंता, भविष्य में कुछ बनने की कल्पना, यह बोझ, यह भार हमें जीवन की डाली से तोड़ देता है और हम डाली से अलग हो जाते हैं, सख्त हो जाते हैं। कोमलता कमज़ोरी नहीं है, कोमलता जीवन है। सख्ती ताक़त नहीं है, सख्ती मृत्यु है। बिना पकड़े, बिना जकड़े, बिना बोझ के तुम जीवन के उसी रहस्य को जान लोगे जो जन्म से तुम्हारे भीतर है। वह रहस्य है - कोमल होकर भी अटूट रहना, नर्म होकर भी न टूटना। ❤️🙏

जय गुरुदेव!

किसी भी सफलता का मतलब है - एक सीमा को पार करना। तुमने तय किया कि 'यहाँ तक पहुँचना है' और पहुँच गए - वही सफलता कहलाई। सीमा तय करने का मतलब है कि तुमने खुद को सीमित मान लिया है और तुमने खुद का कम मूल्यांकन करके खुद को छोटा कर दिया है। अगर तुमने कोई सीमा ही नहीं बनाई, तो सफलता कहाँ है? असफलता कहाँ है? तब तो तुम हर पल में पूर्ण हो एवं तुम अनंत हो। अनंत का न शुरु, न अंत होता है।

जब नदी के साथ बूँद चलती है, तो अपनी समय-सीमा तय नहीं करती है। बूँद बहुत दूर से चलकर आती है और समुद्र में मिलकर अनंतता को प्राप्त हो जाती है। बूँद को समुद्र में मिलकर थोड़ा नहीं, बहुत ज़्यादा मिलता है।

सीमा वाले हमेशा कुछ पाने की दौड़ में रहते हैं, इसलिए अशांत रहते हैं। अनंत वाले हमेशा जो हैं, उसी में संतुष्ट रहते हैं, इसलिए शांत रहते हैं।

सफलता एक पड़ाव है। अनंत होना तुम्हारा स्वरूप है। ब्रह्मांड अनंत है।



जय गुरुदेव!

आपकी जिम्मेदारी सिर्फ इतनी है कि पहले ब्रह्मांड पर विश्वास करना है, फिर समर्पण करना है, उसके बाद आपके लिए प्राप्त करना बचता है। जब आप किसी चीज की प्रबल इच्छा रखते हैं, फिर ब्रह्माण्ड पर विश्वास करते हुए उसे छोड़ देते हैं, तो ब्रह्मांड आपके विश्वास करने से ही उसे प्रगट करता है।

जब आप चिंता, बैचेनी, अविश्वास को छोड़ते हैं तो आपके पास जगह खाली हो जाती है और ब्रह्माण्ड कभी किसी के पास खाली जगह नहीं रहने देता। फिर उसे शांति, समाधान, प्रेम और अवसरों से भर देता है। यह ब्रह्माण्ड का नियम है कि खाली स्थान दिव्य-ऊर्जा को ग्रहण करता है। जब मन खाली होता है, तो नए विचार, नए संयोग मिलने लग जाते हैं।

ब्रह्मांड हमेशा दो लहरों पर काम करता है - डर और विश्वास। डर में ऊर्जा सिकुड़ती है और विश्वास में फैलती है, हल्की होती है। विश्वास की ऊर्जा ब्रह्मांड में फैलाने से आप सकारात्मकता से परिपूर्ण हो जाएंगे।   

जय गुरुदेव!

एक संत रोज कहते थे - "संसार बंधन है। इससे मुक्त हो जाना चाहिए"। यह सुनकर एक व्यक्ति ने संत जी से कहा - "आप कहते हैं 'संसार बंधन है, मैं इस बंधन से मुक्त होना चाहता हूँ', तो बताइए इससे कैसे छुटकारा पाऊँ?"

संत जी अचानक उठे। वे पास में खड़े खंभे के पास दौड़ कर गए, खंभे को दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया और उससे चिपककर चिल्लाने लगे - "बचाओ! बचाओ! यह खंभा मुझे छोड़ नहीं रहा है। मैं इससे छूट नहीं पा रहा हूँ।" वो आदमी हैरान रह गया। उसने करीब जाकर कहा - "संत जी, यह खंभा आपको कहाँ पकड़े हुए है? आपने ही तो इसे कसकर पकड़ रखा है! इसमें खंभे का क्या दोष है?" तब संत जी ने मुस्कराते हुए उसकी तरफ़ देखा और धीरे से बोले - "बेटा, यही तो मैं तुमसे कह रहा हूँ। इस संसार ने तुमको नहीं पकड़ा हुआ है, तुमने ही इस संसार को पकड़ रखा है। संसार में कोई बंधन नहीं है। बंधन तुम्हारी पकड़ में है। तुम चाहो, तो इसी क्षण छोड़ सकते हो क्योंकि संसार, बंधन नहीं है बल्कि बंधन तुम्हारा 'मैं' है और जब 'मैं' छूट जाता है, तब न खंभा बचता है, न बंधन, बस मुक्ति बचती है। 🙏

जय गुरुदेव!

उपनिषद् कहते हैं कि जैसे वर्षा के दिनों में सूरज को काले बादल ढक लेते हैं, उस समय हम यह नहीं कह सकते कि सूरज निकला नहीं है। हम जानते हैं कि थोड़ी देर में बादल के हटते ही सूरज निकल जायेगा और प्रकाश हो जाएगा। कारण? प्रकाश का होना सूरज का स्वभाव है।

ऐसे ही घृणा रूपी बादल, प्रेम रूपी सूरज को ढक देता है परंतु घृणा के हटते ही प्रेम प्रकट हो जाता है। कारण? हमारा स्वभाव प्रेम ही है। प्रेम जन्मता नहीं है, घृणा के मरते ही प्रेम प्रकट हो जाता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

बुद्ध के नज़दीक आकर एक आदमी ने उनके चरणों में सिर झुका कर प्रणाम किया। ऐसा होते देखकर बुद्ध के पास बैठे हुए दूसरे शिष्यों ने कहा कि भगवान्, आपने तो कहा था कि मेरे चरणों में कभी कोई सिर नहीं झुकाएगा, तो फिर आप इन्हें रोकते क्यों नहीं हैं।

तब भगवान् बुद्ध ने कहा – “मैं होता तो इनको रोकता, मैं हूँ ही नहीं, तब रोकेगा कौन?”

यही बात सर्वसार उपनिषद् में हमारे ऋषि- मुनि कहते हैं कि जीवन में ‘अहम् भाव’ का होना अविद्या है और उसको छोड़ना ही विद्या की उपलब्धि है।

बुद्ध विद्यावान हैं, ‘मैं’ को छोड़ चुके हैं। ‘अहम्’ ही जीवन है, उसको छोड़ना जीवन में तृप्त होना है और वही ‘मोक्ष’ है। ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव!

हम जिस रास्ते पर सुबह सैर कर रहे थे, थोड़े समय के बाद उसी रास्ते पर सुबह ऑफिस जा रहे होते हैं। सैर करते समय हमारी मन की स्थिति पर और ऑफिस जाते समय मन की स्थिति की तुलना पर गौर करें। विचार करें अपने मन में, पैरों की स्थिति को याद करें। सोचें कि सुबह सैर की स्थिति में मानो एक खेल हो रहा था और उस समय आनंद का क्षण अलग था, लेकिन ऑफिस जाने की अवस्था में वह खेल और आनंद कहाँ खो गया?

वास्तव में खेल ही हमारा स्वभाव है, इसी से विवेक पैदा होता है। प्रयासरहित किया हुआ कार्य ही ध्यान बन जाता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

साधना को कभी परिश्रम मत समझना। कारण? जब परिश्रम करते हैं, तो परिणाम की उपेक्षा रहती है। उससे थकान महसूस होती है।

साधना को प्रेम समझने से उसमें कभी थकान महसूस नहीं होती है। आप स्वयं को नदी की तरह प्रयासरहित प्रेम में छोड़ देते हैं, तो मंजिल की फ़िक्र नहीं रहती है और लक्ष्य कब हासिल हो जाता है पता ही नहीं चलता है।

प्रेम में चलते रहने से 'मैं' भाव का विसर्जन हो जाता है जिससे तुम नहीं, मंजिल तुम्हारे तक पहुँचती है। 🙏💛❤️

जय गुरुदेव!

मृत्यु में आप एक शरीर से निकलकर दूसरे शरीर से जुड़ जाते हैं और मृत्यु में आप पूर्णतया बदलते भी नहीं हैं। आप वैसे ही रहते हैं जैसे पहले थे, केवल आपके कपड़े बदल जाते हैं। इसलिए मृत्यु कोई बड़ा खतरा नहीं होता है, ध्यान का होना — होश के साथ — पूर्णतया मृत्यु है।

ध्यान के बाद आप वैसे नहीं रहते हैं जिस प्रकार आप पहले से थे। ध्यान आपको गहराई से बदलने की प्रक्रिया है। ध्यान मृत्यु से भी बड़ा अनुभव है क्योंकि मृत्यु केवल आपसे शरीर छीनती है लेकिन ध्यान होश में रहते हुए एवं जीते जी मरने की कला है जो आपको, स्वयं से ही छीन लेता है। ध्यान में 'नाम' और 'रूप' विलीन हो जाते हैं।



जय गुरुदेव!

एक बार तुमने खुद को अनंत की हवाओं के हवाले कर दिया - न रोका, न टोका, न पूछा कि कहाँ ले जा रही हो। जहाँ हवाएँ ले गईं, तुम चले गए — पूरब जाने की जिद थी, पर हवाएँ पश्चिम की ओर बह रही थीं, तो तुमने कहा कि ठीक है, जहाँ ले चलो।

तुम्हारी कोई अपेक्षा न रही, कोई नक्शा न रहा। तुमने बस खुद को छोड़ दिया। तब उसी पल तुम्हें 'प्रेम की कुंजी' मिल जाती है क्योंकि प्रेम का मतलब 'समर्पण' है। 'ध्यान' का मतलब 'बह जाना' है।

ध्यान कोई कर्म नहीं, कोई साधना नहीं है। ध्यान का अर्थ अपने को अनंत में विलीन होने देना है। जो 'तुम' करते हो, वो 'तुमसे' कभी बड़ा नहीं हो सकता, पर जब तुम करना छोड़ देते हो, तब जो बचता है, वही 'अनंत' है, वही 'प्रेम' है, वही 'ध्यान' है। 🧡❤️🙏

जय गुरुदेव!

खुश रहना, प्रसन्न रहना भी किसी व्यक्ति के सोचने का रवैया हो सकता है। दुखी रहना, परेशान रहना भी किसी व्यक्ति के सोचने का एक तरीका हो सकता है। अगर हमने संकल्प ले लिया और अपनी ज़िम्मेदारी ले ली कि मुझे कोई भी दुःखी और परेशान नहीं कर सकता, तो आप यह कर सकते हैं।

मैं हर काम को करते हुए खुश रहूँगा, आपको कोई भी व्यक्ति, वस्तु और परिस्थिति कभी परेशान व दुःखी नहीं कर सकती - ऐसा जानना और दृढ़ता के साथ पालन करना ही सुखी व प्रसन्न रहने का मूल मंत्र है।

जय गुरुदेव!

ऋषियों ने उपनिषद् में कहा है - "अन्नं ब्रह्मा" अर्थात्, अन्न को ग्रहण करते ही तुम्हारी आत्मा तृप्त हो जाती है और तुम्हें भोजन में इतना आनंद आने लग जाता है कि जैसे परमात्मा यानि ब्रह्म को प्राप्त कर लिया हो।

आदमी को भिन्न-भिन्न (खट्टा, मीठा, कड़वा) स्वाद की अनुभूति होना विलक्षण बात है। पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, सभी को भोजन मिलता है लेकिन भोजन उन सभी के लिए सिर्फ यंत्रवत् है, उनको चाहे कुछ भी खाने को दे दो, उसका स्वाद एक जैसा आता है। हमारे ऋषि अनूठे थे कि उन्होंने अन्न को परमात्मा की उपाधि दे दी है। अन्न को कृतज्ञता से ग्रहण करने पर ही ब्रह्म का पता लगता है या परमात्मा अनुभव में आता है। ❤️🙏❤️

जय गुरुदेव!

आत्मा अलिप्त है। अलिप्त रहना उसका गुण है। लेकिन हमारी बुद्धि का काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह में लिप्त रहने से हम लिप्तता का अनुभव करते हैं और हमारे सभी दुःखों का कारण यही है। जब हमारी बुद्धि विवेकवान होती है और सजगता एवं होश में रहती है, तब हम शत्रु प्रतिशत इनसे अलिप्त रह सकते हैं। तब हम आसक्ति रहित रह सकते हैं।



जय गुरुदेव!

किसी भी काम या जीवनचर्या के प्रति धैर्य रखना आलस्य नहीं होता है और किसी भी काम या जीवनचर्या के प्रति तीव्रता का होना उतावलापन नहीं है।

जीवन में कुछ भी हासिल करने के लिए 'तीव्रता' और 'धैर्य' इन दोनों के बीच संतुलन और सामंजस्य बनाए रखने के प्रति कुशलता आवश्यक है।



जय गुरुदेव!

उपनिषद् में 'ब्रह्म' के चार पाद कहे गए हैं - ये चार अवस्थाएँ हैं, जो जीवन के आयाम हैं।

जाग्रत: यहाँ चेतना बहिर्मुखी है। परमात्मा ही 'विशत पुरुष' बनकर संसार रूप में जाग रहा है। जाग्रत में तुम कर्ता नहीं, निमित्त मात्र हो।

स्वप्न: दिन का संसार छूट गया, पर मन ने नया संसार बना लिया है। जैसे रात का स्वप्न मिथ्या है, वैसे दिन का संसार भी मिथ्या है।

सुषुप्ति: यहाँ चेतना न बाहर है, न भीतर। मन भी लय हो गया है। देह नहीं थी, मन नहीं था, संसार नहीं था, फिर भी आनंद था। इसका अर्थ है कि आनंद तुम्हारा स्वभाव है, वह किसी पर निर्भर नहीं है।

तुरीय: इसमें न स्थूल, न सूक्ष्म, न कारण होता है। जैसे मिट्टी घड़े में है, घड़े के बिना भी उसको मिट्टी कहते हैं। कर्ता और कर्म दोनों एक हो जाते हैं। दृश्य और द्रष्टा एक हो जाते हैं। यह राजा की अवस्था है क्योंकि राजा के लिए महल और जंगल दोनों समान होते हैं।

जाग्रत में रहते हुए जान लेना कि 'मैं जाग्रत से परे हूँ', यही 'जीवनमुक्ति' है। तुरीय को जान लिया, तो मृत्यु भी एक स्वप्न है, जन्म भी एक स्वप्न है।
"तुम तो सदा थे, सदा हो, सदा रहोगे।" 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

आँख किसी भी आकार पर तुरंत टिक जाती है लेकिन जब आँख निराकार पर टिकना शुरू करती है, तो हमारी बुद्धि के द्वारा बनायी हुई आकृतियाँ और खिलौने बीच में आ जाते हैं। जब तक यह अनुभव नहीं होगा कि यह दुनिया हमारी बुद्धि के द्वारा ही बनायी गई है, तब तक जो परम रहस्य है, वह उजागर नहीं होगा।

जय गुरुदेव!

संसार में दो ही ध्रुव हैं — सुख और दुःख, राग और विराग, भोग और त्याग, भाव और अभाव। हमारा मन एक से बंधता है, फिर दूसरे से बँधता है, बंधन में ही पीड़ा है।

तुम तो आकाश स्वरूप हो, न सुख तुम्हारा है, न दुःख; न राग तुम्हारा है, न वैराग्य; न भोग तुम्हारा है, न त्याग तुम्हारा है। यह सब बादल हैं, आते हैं, छाते हैं और चले जाते हैं।

तुम तो वह हो, जो देखता है, जो जानता है कि सुख आया और चला गया; जो जानता है कि दुःख आया और चला गया; जो न सुख में डूबता है, न दुःख में डूबता है। विरोधाभासों के बीच भी जो न झुके, न टूटे, वही तटस्थ है। वही मुक्त है। इस तटस्थ साक्षीपन को ही 'समाधि' कहते हैं - न पकड़ना, न छोड़ना। बस होना। बस देखना।

सत्य यह है कि तुम न प्रकाश हो, न अंधकार। तुम वह आकाश हो जिसमें दोनों घटित होते हैं। 🙏❤️❤️

जय गुरुदेव!

पानी को हाथ से कसकर पकड़ते हैं, तब वह छूटता चला जाता है। उसे बहने दो, वह अपना रास्ता खुद बना लेता है। कभी-कभी जीवन की परिस्थितियाँ, जो घटित हो रही है वह समझ में नहीं आए, तो परिस्थितियों के प्रति यांत्रिक नहीं होकर स्वचालित हो जाना चाहिए और उनको शांत एवं तटस्थ होकर देखना चाहिए। समय आने पर जीवन अपना मार्ग स्वयं बना लेता है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव !!

सादगी भौतिक वस्तुओं की नहीं होती है, बल्कि दृष्टि की होती है। एक आदमी लँगोटी पहनकर कहता है कि देखो मैं कितना त्यागी हूँ और सादगी में जी रहा हूँ। दूसरा आदमी टाई पहनकर कहता है कि देखो मैं कितना सफल हूँ और कितना महत्त्वपूर्ण हूँ।

ज्ञान के द्वारा देखा जाए, तो इन दोनों की आँखें किसी दूसरे पर टिकी हैं और दोनों ही भीतर से भिखारी हैं क्योंकि वे सम्मान की भीख माँग रहे हैं। एक ने त्याग को आभूषण बनाया है और दूसरे ने भोग को बनाया है लेकिन दोनों ने ऐसा करके अपने 'मैं' को ही सजाया एवं पोषित किया है।

विवेक से देखा जाय, तो समझ आता है कि अगर लँगोटी दिखावे के लिए पहनी है, तो वह टाई से भी भारी है और अगर टाई सहजता से पहनी हुई है, यह लँगोटी से भी हल्की है।

असली सादगी तब है, जब दूसरे की आँख से मुक्ति मिलती है। कबीर जी कहते हैं - "मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपड़ा", अर्थात्, मन को नहीं रंगा और कपड़ा रंग लिया तो कोई फायदा नहीं है। वस्त्र बदलना आसान है, दृष्टि बदलना कठिन है। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

आपकी जैसी भावना होती है, वैसी सोच हो जाती है। आपकी सोच हमेशा बाहर से आती है, बस सोचने वाला तरीका अन्दर है। कारण, कि वह तरीका प्राकृतिक है।

आप सोच नहीं सकते हैं कि आपको सोचना भी नहीं है। आपके द्वारा आँखें बंद करके ध्यान में जाते ही कुछ सड़ा हुआ आपकी नाक पर लाकर रख दिया जाता है, तो तुरंत आपका ध्यान बदबू पर चला जाएगा। अब देखना यह है कि पहले बदबू आई और आपका ध्यान बाद में गया। ध्यान हमेशा बाद में जाता है। ध्यान हमेशा उतरता है, ध्यान हमेशा घटित होता है। ध्यान करने की कोशिश करने लगे, कि तुम फँसे और ध्यान समझो छूट गया।

ध्यान का मतलब है सिर्फ तुम्हें ध्यान से जाँचना है और तब तक जाँचना है, जब तक वह छूट न जाए। वह परम ध्यान हो गया। मतलब, 'जाँचना' ही अपने आप 'ध्यान' बन जाता है। 🙏❤️❤️

जय गुरुदेव! 🙏

ज्ञानी का यह लक्षण है कि अपने प्रति विरोधात्मक व्यवहार होने पर भी अपने संतुलन को बनाए रखता है। वह अपनी मुस्कराहट को एक शिशु की भाँति बनाए रखता है। तभी कहा गया है कि जैसे

योगी एक शिशु है और शिशु एक योगी है क्योंकि मुस्कराहट शिशु को छोड़ती ही नहीं है। एक शिशु बिना किसी कारण के हमेशा खुश रहता है, बिना किसी कारण के। उसकी मुस्कराहट में कोई द्वेष नहीं, कोई अहंकार नहीं, बस शुद्ध आनंद है।

ज्ञानी भी इसी तरह होता है, वह अपने भीतर की शांति को बनाए रखता है, चाहे बाहर कुछ भी हो रहा हो, वह मुस्कराता रहता है क्योंकि वह जानता है कि जीवन एक खेल है, और वह इसमें एक नर्तक है। वह अपने भीतर की मुस्कराहट को कभी नहीं खोता, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हों। ❤️ 🙏

जय गुरुदेव!

एक बार बुद्ध के चेहरे पर एक आदमी ने थूक दिया, तो उसके जवाब में बुद्ध ने शांति से अपना चेहरा साफ किया और उस व्यक्ति से पूछा कि अगर कोई व्यक्ति किसी को कोई भेंट देता है परन्तु वह व्यक्ति उस भेंट को स्वीकार नहीं करता है, तो उस भेंट का मालिक कौन होगा? तब उस व्यक्ति ने जवाब दिया कि उस भेंट का मालिक तो भेंट देने वाला ही होगा। बुद्ध ने कहा - इसका मतलब कि तुमने जो गाली और अपमान दिया, उसके मालिक तुम्हीं हो क्योंकि मैं तुम्हारी यह भेंट स्वीकार नहीं कर रहा हूँ।

ठीक इसी प्रकार, एक ज्ञानी अगर किसी को सदुपदेश देता है तो ऐसा करके वह दूसरों की भलाई तो कर ही रहा है, लेकिन वह स्वयं अपना उपकार भी कर रहा है क्योंकि अगर कोई वापस लौटा रहा है तो भी ज्ञानी का ही भला हो रहा है। कारण? ऐसा करने से उसमें शांति और करुणा का संचार हो रहा है।



जय गुरुदेव!

थापिआ न जाइ, कीता न होइ ।आपे आपि निरंजनु सोइ ॥जिनि सेविआ,
तिनि पाइआ मानु ।नानक गावीऐ, गुणी निधानु ॥(जपु जी साहिब)

प्रभु को प्रयत्नपूर्वक तथा जबरदस्ती से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। वह स्वयं को भारमुक्त, स्वच्छंद, स्वच्छ और सरल, निष्कलंक होने पर अपने आप मिल जाता है। जिन लोगों ने उसको भजा है, उनका सभी प्रकार से सम्मान किया जाता है तथा वे लोग गुणों का खजाना प्राप्त कर लेते हैं, सर्वगुण संपन्न हो जाते हैं। प्रभु का गुणगान करो, वह श्रेष्ठता का सर्वोत्तम खजाना है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

देश का ज्ञान कभी प्रत्यक्ष नहीं होता है, हमारे शरीर के बाहर और भीतर, दोनों जगह देश मौजूद रहता होता है। देश और काल एक काल्पनिक सत्य है, जो नित्य और अपरिवर्तनशील है। जो बदलता हुआ लगता है और बदलता कुछ भी नहीं है, वही 'माया' है।

काल को चलाने वाला साक्षी 'आत्मा' होता है, जो नित्य, चैतन्य और अपरिवर्तनशील है।

देश हमारे मन, दिल, दिमाग में बैठा हुआ होता है। नित्यता हमेशा अनित्यता के सापेक्ष होती है। काल में पैदा हुआ हर पदार्थ मरता है। काल और साक्षी आत्मा ही 'सत्यम्' है। देश, काल और आत्मा में एकता है, इसलिए यही 'ब्रह्म' है।

'साक्षी' और 'आत्मा' चैतन्य है। इन दोनों में लक्षण की एकता होने के कारण इन्हें 'सत्य' कहा गया है और यही 'ब्रह्म' का स्वरूप हैं। आत्मा ही 'ब्रह्म' है और ब्रह्म ही 'सत्य' है। जो बदलता हुआ लगता है और बदलता कुछ भी नहीं है, इसको ही 'माया' कहते हैं।



जय गुरुदेव!

तीन अवस्थाएँ हैं :

- 1) नरक - जो तुमने ग़लत किया, जो तुम्हारे पाप हैं, उसके परिणाम में दुःख लेना ही पड़ेगा ।
- 2) स्वर्ग - जो तुमने अच्छा किया, जो पुण्य किये हैं, उसके परिणाम में सुख लेना ही पड़ेगा ।
ये दोनों स्थितियाँ, परिणाम की इच्छा से किये गये कृत्य हैं। वह तुम्हारे बन्धन का कारण भी होता है।
- 3) मोक्ष - यह चेतना की ऐसी अवस्था है जिसमें तूने जो कुछ भी किया है, वह बिना इच्छा के कृत्य किया है, अकर्ता भाव से किया है। उस कर्म में कोई बन्धन नहीं होता है, कुछ प्राप्त करने इच्छा नहीं होती है। ऐसी दशा के कृत्य का परिणाम 'मुक्ति' है, 'परमात्मा' है, 'ध्यान' है।❤️🙏🏻💛

जय गुरुदेव!

काला और सफ़ेद मिलकर पूर्ण होते हैं। कारण? काले के बिना सफ़ेद का कोई अस्तित्व नहीं है। जैसे - ब्लैक बोर्ड पर सफ़ेद पेन से लिखने पर ही जो आप कहना चाहते हैं, वह अस्तित्व में आता है या यूँ कहें कि सफ़ेद रंग और काला रंग दोनों के होने का एक साथ पता चलता है। इसका मतलब कि अगर सफ़ेद नहीं होता, तो काले की नैसर्गिक कोई पहचान नहीं हो सकती है।

समझने की बात है कि प्रकृति में विपरीत दिखाई देने वाली हर वस्तु का एक-दूसरे के प्रति लगाव है। प्रकाश का अंधेरे के साथ, अच्छाई का बुराई के साथ, दिन का रात के साथ, भरोसा का अविश्वास के साथ। स्त्री का पुरुष के साथ, भद्र का अभद्र के साथ। यह जानकर और यह सोचकर हमारे अंदर ज्ञान का संचार होता है कि समान एवं असमान परिस्थिति एक-दूसरे के समानान्तर होती है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

“जब मैं उसको जाने देता हूँ, जो मैं हूँ, तब मैं वो बन जाता हूँ, जो मैं हो सकता हूँ।” -

यह वाक्य एक बीज की तरह है, जो अगर सही जमीन पर पड़ जाए, तो एक दिन वृक्ष बनकर फल जरूर देगा। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

ध्यान क्या है?

मनुष्य का जीवन जीने का तरीका है और ध्यान व्यक्ति को वर्तमान में लाता है जिससे आनंद मिलता है।

आदमी का जीवन तीन हिस्सों में बँटा होता है :

- भूतकाल में जीने से पछतावा मिलता है।
- भविष्य में जीने से चिंता मिलती है।
- वर्तमान में जीने से आनंद मिलता है।

ध्यान किसी व्यक्ति को इस बँटे हुए जीवन से निकालकर वर्तमान में लाता है। ध्यान करने से आदमी को आनंद की अनुभूति होती है क्योंकि सारी ऊर्जा वर्तमान में आ जाती है। इससे व्यक्ति वर्तमान में खुशहाल जीवन जीने का मज़ा ले सकता है।   

जय गुरुदेव!

गैडे की एक खासियत है कि उसकी गर्दन नहीं घूमती है, जिससे वह सिर्फ सीधा और सामने देख सकता है, बाएँ-दाएँ, पीछे उसके लिए अंधेरा है।

हमारी बुद्धि भी कुछ वैसी ही है।

वो भी एक आयामी है। एक ही दिशा में पकड़ती है, एक ही बिंदु पर अटकती है और बुद्धि का स्वभाव हर चीज़ को ताक़त से जकड़ लेना होता है। जैसे कोई रस्सी को लगातार कसकर पकड़ लेता है, तब उसका हाथ दर्द करने लग जाता है, शरीर थक जाता है, यही नियम बुद्धि पर भी लागू होता है। पर बुद्धि को यह समझ ही नहीं आता कि छोड़ देने में ही विश्राम है। सच्चाई यह है कि जिसे तुम कसकर पकड़ते हो, वही तुम्हें तोड़ता है।

कर्म को, परिणाम को, 'मैं कर रहा हूँ' के भाव को पकड़े रहो, तो थकान ही हाथ लगती है। पर जब तुम प्रयासरहित होकर काम करने लग जाते हो, तुम जब काम करते हुए कर्ता नहीं बनते। जब प्रवाह में बहते हो, संघर्ष नहीं करते, तब काम अपने आप पूरा हो जाता है और थकान भी नहीं आती। यही ज्ञान है। यही सहजता है।

बुद्धि साधन है, मंजिल नहीं। बुद्धि से तुम कर्म तक पहुँच सकते हो, पर आत्मा को तो बुद्धि के पार ही जाना पड़ता है क्योंकि आत्मा, सीमा से परे है और बुद्धि सीमा में बँधी है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

परमात्मा को तुम खोज नहीं सकते। कारण? खोजा तो उसको जाता है, जो तुमसे दूर है, तुमसे भिन्न है, तुमसे अलग है। जैसे - सागर से लहर उठती है लेकिन वह सागर को जब तक जान नहीं पाती, तब तक सागर से दूरी समझ में आती रहती है, जबकि सागर से उसकी दूरी इंच-मात्र भी नहीं है। लहर अपने को सागर में समाकर ही सागर को जान पाएगी क्योंकि इस प्रकार लहर को स्वयं के अस्तित्व को छोड़ना पड़ता है और सागर के साथ जीकर ही समझ में आएगा कि वह सागर से भिन्न नहीं है। ठीक इसी तरह, आप परमात्मा में समाकर उसे जान सकते हैं, उसके साथ जीकर उसे समझ सकते हैं। कारण? आप स्वयं ही परमात्मा हैं। आपसे परमात्मा की इंच-मात्र भी दूरी नहीं है, वह आपके हृदय में, आपके भीतर, आपके अस्तित्व में समाया हुआ है।

परमात्मा सबके भीतर विराजमान है और यही सत्य है, यही शाश्वत् है।



जय गुरुदेव!

छोटा बच्चा चलता है। वह गिरता है, घुटने पर चोट खाता है। वह फिर उठता है, फिर गिरता है। वह गिरने से डरता भी नहीं है, घुटने पर चोट लगने से भी नहीं डरता है और एक दिन वह खड़ा हो जाता है, चलने लग जाता है। तब उस बच्चे की शान देखते ही बनती है और वह कहता है कि मैंने जीत लिया है।

ठीक वैसी ही घटना तब घटती है, जब आदमी 'बुद्धत्व' को प्राप्त होता है, आत्मा के पैरों पर खड़े होकर चलने लग जाता है। तब भय समाप्त हो जाता है।

"अप्प दिपो भव" - अपने दीपक खुद बनो। ❤️ 🙏 🌟

जय गुरुदेव!

कबीर जी -

अनल आकाशा घर किया, मध्य निरंतर वास।

वसुधा, व्योम बिरकत रहे, बिना ठोर विश्वास।।

अनल पक्षी, जीव का पर्याय है। आकाश, ब्रह्म एवं परमात्मा का पर्याय है। धरती, संसार, देह, माया का पर्याय है।

अनल पक्षी कभी धरती नहीं छूता है। वह खाता-पीता गगन में है, सोता गगन में है। अंडा भी उसी शून्य में देता है। अंडा जब गिरता है, तो धरती खींचती है, पर धरती तक पहुँचने से पहले ही अंडा फूट जाता है और बच्चा पंख खोलकर फिर आकाश को लौट जाता है। धरती पकड़ती है, आकाश छोड़ता है। धरती बाँधती है, आकाश मुक्त करता है। अनल ने जान लिया कि बंधन में सुरक्षा नहीं, मुक्ति में सुरक्षा है। इसलिए वह बिना घर के, पूरे ब्रह्मांड को घर बनाकर जीता है।

नाम-रूप रूपी अंडे को बीच में ही फोड़कर ही तुम्हारी बंधन मुक्ति हो सकती है। विश्वास के पंख खोलो और जान लो कि प्रकृति ने तुम्हें थाम रखा है, इसलिए तुम गिर ही नहीं सकते हो। तुम गिर नहीं सकते क्योंकि आकाश के सिवा और कुछ नहीं है। परमात्मा को पाने के लिए अटूट विश्वास होना चाहिए, तभी अनंत ब्रह्मांड के, सत्य आकाश के दर्शन होते हैं। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव! ❤️

प्रीति और कामना एक ही नदी की दो धाराएँ होती हैं। प्रीति का मूल है - तुम सुखी हो जाओ और कामना का मूल है - मुझे सुख मिल जाए।

प्रेम, स्नेह, श्रद्धा, भक्ति — ये सब प्रीति की ही सीढ़ियाँ हैं। लेकिन समझना यह है कि इनमें कामना का अंश कितना बचा है।

प्रेम: पत्नी से प्रेम में 'मैं' छिपा होता है। यहाँ देने के अलावा लेने की इच्छा ज्यादा है, इस प्रेम में कामना का अंश सबसे ज्यादा होता है।

स्नेह: बेटे के प्रति स्नेह में 'देना' थोड़ा बढ़ जाता है, पर भीतर एक सूक्ष्म कामना रहती है कि बेटा बड़ा होकर मेरा नाम रोशन करेगा, मेरा सहारा बनेगा।

श्रद्धा: गुरु के प्रति श्रद्धा में 'देना' बढ़ जाता है, पर भीतर मोक्ष की कामना बची रहती है कि गुरु मुझे मुक्ति दिलाएगा, मुझे ज्ञान देगा। यहाँ कामना भौतिक से आध्यात्मिक हो गई है।

भक्ति: भक्ति वह बिंदु है, जहाँ कामना पूरी तरह गिर जाती है। यहाँ न माँग है, न अपेक्षा होती है। भक्ति में अहंकार नहीं रहता। केवल कृतज्ञता रहती है। यहाँ प्रार्थना माँग नहीं, समर्पण बन जाती है। यही शुद्ध प्रीति है। यही परमात्मा है।

प्रेम में बंधन है, स्नेह में थोड़ी मुक्ति है। श्रद्धा में और मुक्ति है, परंतु भक्ति में पूर्ण मुक्ति है। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

एक नवजात शिशु पूरे दिन में लगभग 80 से 90 बार मुस्कुराता है क्योंकि बच्चे का संबंध गहरी और लंबी साँस लेने की प्रक्रिया से होता है, जिससे नाभि और उसके आसपास के क्षेत्र में ऊर्जा का स्पन्दन होता है। इससे बच्चे का भावनात्मक खुश रहना सक्रिय हो जाता है। यह एक साँस के द्वारा घटित प्राकृतिक अद्भुत घटना है।

हम समय के साथ बड़े होते जाते हैं और नाभि से साँस लेने की बजाय छाती से साँस लेना शुरू कर देते हैं। इससे अकारण मुस्कुराना भूल जाते हैं और कारणवश भी बहुत कम हँसते हैं। इससे हमारी प्रकृति, प्रेम और अध्यात्म से दूरियाँ हो जाती हैं। एक बच्चा आध्यात्म और प्रेम की प्रतिमूर्ति होता है।

हम ध्यान, प्राणायाम, योग और साँस पर ध्यान देकर वापस उस दिशा में आगे बढ़ सकते हैं और अपने जीवन को एक नई दिशा दे सकते हैं। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

आमतौर पर आपको पता ही नहीं होता कि आप क्या चाहते हैं, आपका लक्ष्य क्या है। एक बार जब आप अपने लक्ष्य और इच्छाओं के बारे में स्पष्ट हो जाते हैं, तो आपका अगला कदम यह होता है कि आप उस लक्ष्य या इच्छा को प्राप्त कर सकते हैं।

आप अगर इस तरह से विश्वास नहीं करते हैं, तो ऐसा लगता है कि आपके पास केवल इच्छाओं की सोच का ढेर मात्र है, ढेर सारी इच्छाएँ पालने से कुछ भी साकार नहीं होता है।

‘ध्यान’ या ‘मेडिटेशन’ इच्छाओं के बारे में स्पष्टता लाने में आपकी मदद करता है और उन्हें साकार करने के लिए ऊर्जा का विकास करता है।



जय गुरुदेव!

आपका यह जीवन अपनी चेतना को ऊपर उठाने का सुनहरा मौका मिला है, जो सिर्फ़ मनुष्य को ही प्राप्त होता है, ताकि आप अपने आसपास के वातावरण, लोग, वस्तु, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, जानवरों के साथ मिलकर और उनके साथ रहकर अपने जीवन की सच्चाई को जान सकें, उनसे मैत्री, प्रेम और करुणा करके अपनी चेतना को ऊपर उठा सकें तथा सत्य को जान सकें। कारण? यही 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' है। यह मौका फिर मिलने वाला नहीं है।

इस पृथ्वी की किसी भी रचना के साथ निर्ममता, दानवता, असहिष्णुता, अलगाव से आपकी चेतना शून्य की तरफ़ अग्रसर होगी। जो जानवरों से स्वयं को नीचा समझता है, वह जानवरों से भी ऊपर उठ जाता है और जो जानवरों को अपने से नीचा समझता है, वह जानवरों से भी नीचा गिर जाता है। ❤️ 🙏 🟡

जय गुरुदेव!

प्रकृति का सौंदर्यशास्त्र यह कहता है कि वर्तमान में होना ही पूर्ण है। प्रकृति का गणित तुलना-रहित सौंदर्य का है। मोर नाचता है क्योंकि नाचना उसका स्वभाव है। उसके पंखों में रंग है, चाल में लय है और उसे पता भी नहीं कि वह सुंदर है। दूसरी ओर, मोरनी नाचती नहीं है और उसके पंख सादे हैं एवं रंग फीके हैं, लेकिन मोरनी का मादा होना ही उसकी पूर्णता है। उसके भीतर सृजन है, ममता है, धैर्य है। मुर्गे के सिर पर कलगी होती है, छाती तनी है, बाँग में अकड़ है। दूसरी ओर, मुर्गी धूल में चुपचाप दाना चुगती है। मुर्गी सृजन का द्वार है, इसलिए उसका होना ही सौंदर्य है।

यह सभी स्वाभाविक रूप से सरल हैं। यह प्रयास रहित हैं, इसलिए सुंदर और शांत हैं। प्रकृति में कमी नहीं है, तुलना में कमी है। गुलाब को कमल से हीनभाव नहीं होता, कमल को गुलाब से ईर्ष्या नहीं। सौंदर्य करना नहीं पड़ता, सौंदर्य हुआ जाता है। ❤️ 🙏 🧡

जय गुरुदेव!

पहला, कि मैं जान लूँगा कि मैं कौन हूँ लेकिन जानने वाला का मिट जाना ही यह जानना है। क्यों? क्योंकि 'मैं' जानने वाला भी एक विचार ही है। जब विचार मिटे, तो जो शेष बचता है, वही सत्य है।

दूसरा, कि मैं जान लूँगा की मुझे आनंद कैसे मिलेगा, ऐसा नहीं है। आनंद तो उसी का नाम है जब 'मैं' और 'तू' का भेद गिर जाता है। आनंद बाहर से नहीं, भीतर से पनपता है, वह आनंद ही सच्चिदानंद है।

तीसरा, मैं जान लूँगा कि मोक्ष कैसे प्राप्त होगा। मृत्यु तो शरीर की होती है, तुम जन्म के पहले से ही हो, जो हो। जो जानने योग्य है, वह कभी जन्मा ही नहीं, तो मरेगा कौन?

मोक्ष प्राप्ति नहीं होती है, बंधन का पर्दा हटते ही पता चलता है कि 'मैं' तो वही हूँ, जो सब जगह मौजूद है। वही मोक्ष है।

चौथा, कि मैं जान लूँगा कि दुःख कैसे होता है। दुःख का कारण बाहर की घटना से नहीं है, यह हमारे भीतर 'मैं' का आघात है। इस बात का विवेक से ज्ञात होते ही दुःख शरीर तक रह जाता है, चैतन्य तक नहीं पहुँचता है। संसार में 'धन' एवं आध्यात्मिकता में 'ब्रह्म-प्राप्ति' की वासना और अभिलाषा बची रहती है, तब तक सच्ची साधनाशुरु नहीं होती है। साधना तो तब शुरु होती है, जब चाहने वाला ही गिर जाता है और 'जानना' से 'होना' शेष बचता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

आत्म-जागरूक पुरुष के चैतन्य मन में बाहर की घटनाएँ अंदर नहीं जाती हैं। जैसे - सागर में सारी नदियाँ समा जाती हैं, उसके उपरांत भी सागर पर कोई असर नहीं पड़ता है। इसी प्रकार लकड़ी में आग लगने के बाद उसमें किसी दूसरी वस्तु का प्रवेश होते ही वह भी आग बन जाती है।

इंद्रियाँ चैतन्य हैं, जगत भी चैतन्य है। जब तुम चैतन्य होकर मन में जाते हो, वह मन तब विचार-शून्य हो जाता है।

एक ध्यान विधि है - तुम स्वयं को अस्तित्व में यानि प्रकृति में विलय करके और सबकुछ छोड़कर ध्यान में जाते हो, तब 'योग समाधि' की अवस्था प्राप्त होती है जिससे गहरी शांति और स्थिरता प्राप्त होती है।

दूसरी ध्यान विधि : जब हम चैतन्यता का, मन का, आत्मा का विस्तार या फैलाव अनुभव करते हैं, तब सबकुछ तुम्हारे में समा जाता है, उसके बाद तुम्हारे सिवा शेष कुछ नहीं बचता है। उसको 'ज्ञान समाधि' कहते हैं। इस प्रकार गहरी एकता की अनुभूति होती है। इस अवस्था में यह समझना अनिवार्य है कि विवेक के साथ सजकता बनी रहने पर समाधि की घटना घटती है। ❤️ 🙏 ❤️

जय गुरुदेव!

‘वाणी’ बाहर किसी से जुड़ने का सेतु है और ‘मौन’ भीतर स्वयं से जुड़ने का पुल है। दूसरे से जुड़ने के लिए शब्दों की नाव चाहिए लेकिन स्वयं से मिलना हो, तो शब्द दीवार बन जाते हैं। जहाँ शब्द गिर जाता है, वहाँ ‘द्वैत’ गिर जाता है और जब द्वैत गिर जाता है, तब केवल एक बच जाता है। वही तुम्हारा अपना स्वरूप है।

ऋषि इस प्रक्रिया को ‘प्रत्यगात्मदर्शन’ कहते हैं, जिसमें भीतर मुड़कर आत्मा को देखा जाता है। इसके लिए नेत्र नहीं, दृष्टि चाहिए।

मौन में इंद्रियों का विश्राम होता है। जब इंद्रियाँ बाहर दौड़ना बंद कर देती हैं - कान सुनना छोड़ देता है, आँखें देखना छोड़ देती हैं, मन सोचना छोड़ देता है। इंद्रियाँ नहीं थकती हैं लेकिन इंद्रियों का मालिक थक जाता है। जिस दिन इंद्रियाँ विश्राम में आ जाती हैं, उसी दिन आत्मा जाग जाती है। इस झलक का मिलना ‘समाधि’ है और यही ‘ध्यान’ है।

जब तुम स्वयं को देख लोगे, तब सबको स्वयं में देख लोगे। “सर्वं खल्विदं ब्रह्म” - यह सब ब्रह्म ही है।   

जय गुरुदेव!

एक कदम आगे की ओर बढ़ाना साधना है। एक तीर्थयात्री लालटेन लेकर चला। रास्ता लंबा था, अंधकार घना था। उसने लालटेन उठाई और देखा कि लालटेन का प्रकाश तो बस दस कदम तक ही जा रहा है। ऐसा मन में विचार उठा कि इस थोड़ी दूर के प्रकाश से मैं दस किलोमीटर कैसे पार कर पाऊँगा। यह सोचकर और हताश होकर वह वहीं मार्ग पर ही बैठ गया। तभी एक दूसरा साधक, उससे भी छोटी-सी लालटेन लिए उसके पास से निकला। तभी उसने बैठे हुए यात्री से मंद स्वर में कहा कि भाई, यात्रा के लिए पूरा मार्ग प्रकाशित होना ज़रूरी नहीं है, बस जहाँ पैर रखना है, वहाँ तक उजाला होना काफी है। कोई भी एक साथ दो कदम उठाता ही कहाँ है।

बड़े लक्ष्य तुम्हें डराते हैं क्योंकि वे दूर दिखते हैं लेकिन साधना का नियम है कि वर्तमान कदम ही पूरा मार्ग है। जब तुम पहले कदम पर चित्त लगाते हो, तो दूसरा कदम अपने आप प्रकट हो जाता है। जिसने पहला कदम श्रद्धा से रख दिया है, समझो कि उसने भविष्य को सुलझा लिया और अब गंतव्य उसका पीछा करता रहता है। ❤️🙏💛

जय गुरुदेव!

ईर्ष्या, लोभ, अहंकार ये प्रेम के ही विकृत रूप हैं, जैसे शुद्ध पानी जब गलत नाली में बहे, तो गंदा हो जाता है। प्रेम तुम्हारा स्वभाव है। तुम प्रेम ही हो। जिससे मैं प्रेम कर रहा हूँ, वो मुझसे अलग नहीं है। तब वही प्रेम 'आनंद' बन जाता है।

ईर्ष्या: जब तुम खुद से प्रेम करते हो, तब तुम चाहते हो कि तुम सुखी रहो और जीवन में आगे बढ़ो। उसी समय अज्ञान कहता है कि दूसरे के आगे निकलने से मेरा सुख कम हो जाएगा। प्रेम वही है, पर दृष्टि संकुचित हो गई है।

लोभ: तुम खुद को पूर्ण महसूस करने के चक्कर में कहते हो कि अगर यह वस्तु मेरे पास हो जाए, तो मैं पूर्ण हो जाऊँगा। यह भी प्रेम है, जो वस्तु पर चिपकते ही नाम बदलकर 'लोभ' हो गया है।

अहंकार: तुम खुद से प्रेम करते हो, पर अज्ञानवश अपने शरीर और मन को 'मैं' मान लेते हो। तभी प्रेम कहता है कि मैं सबसे श्रेष्ठ हूँ। प्रेम के इस छोटे से खोल को अहंकार कहते हैं।

कबीर जी: प्रेम गली अति साँकरी, ता में दो न समाहिं "जब तक 'मैं' और 'तू' दोनों खड़े हैं, प्रेम अधूरा है। 'मैं' के गिरते ही जो शेष बचता है वही प्रेम है, वही आनंद है, वही 'ब्रह्म' है। 🙏❤️💛

जय गुरुदेव!

हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन के संगम से पानी बनता है। लेकिन आकाश में बादलों के अन्दर पानी बनने के लिए एक तीसरी ताक़त का सम्पर्क होना ज़रूरी है, नहीं तो बादल यूँ ही खाली घूमते रहेंगे तथा उनमें पानी भी नहीं बनेगा। वह तीसरी शक्ति है - बिजली का चमकना। जब बादलों में बिजली कौंधती है, तभी बादलों में पानी बनता है। बिजली का कौंधना एक उत्प्रेरक का काम करता है। बिजली का इस क्रिया को करने से उसके स्वभाव या क्षमता में कोई असर नहीं पड़ता है लेकिन बिजली के कौंधे बग़ैर यह घटना संभव नहीं है।

ठीक इसी तरह गुरु की हमारे जीवन में उपस्थिति ज़रूरी है। हमारे जीवन में गुरु की मौजूदगी उत्प्रेरक का काम करती है। गुरु के बिना घटना घटित नहीं हो सकती है। गुरु हमारे मूलभूत अस्तित्व में स्थायी परिवर्तन करके आध्यात्मिक एवं सांसारिक जीवन को तिव्र गति प्रदान करते हैं।



जय गुरुदेव!

सात्विकता के साथ प्रकृति से जुड़ना ही ईश्वर से जुड़ना होता है।

- (1) खाना: इसका संबंध जल-तत्त्व से है। शुद्ध भोजन करने से जीवन में सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।
- (2) देखना: इसका संबंध अग्नि-तत्त्व से होता है। जैसे - सुंदर दृश्य देखने से प्रेम उत्पन्न होता है। दिव्यतापूर्ण दृष्टि से सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।
- (3) सुनना: इसका संबंध आकाश-तत्त्व से होता है। कीर्तन, भजन, नगाड़ा आदि संगीत सुनने से मन प्रसन्न रहता है, इससे सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।
- (4) स्पर्श: चमड़ी का वायु-तत्त्व से संबंध होता है। शरीर को मनभावन स्पर्श से खुशी मिलती है, जैसे - गर्मी में ठंडी हवा के स्पर्श से रोम छिद्रों को सुख मिलता है, जिससे सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।
- (5) सूँघना: इसका संबंध पृथ्वी-तत्त्व से होता है। सुगन्धित फूल तथा साधु-संतों के पास बैठने से हमारे शरीर में सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।

आध्यात्मिकता का सूत्र यह कहता है कि पंचतत्त्व शरीर ने अपने जन्म के बाद से यहीं से लिया है, अगर आप इसको श्रद्धा, विश्वास, विवेक से समझकर छोड़ देते हैं कि 'यह मैं नहीं हूँ', तब हम 'समाधि' एवं 'ज्ञान' को उपलब्ध हो सकते हैं। ❤️🌺

जय गुरुदेव!

जो ध्वनि बिना चोट के उत्पन्न होती है और जिस ध्वनि के होने से आपका मन परेशान नहीं होता है (जैसे - ताली की आवाज़), ऐसी ध्वनि जो शरीर, कंठ, होंठ और मन से भी उत्पन्न नहीं की जाती हो, वही आपके अंतर्मन तक पहुँच सकती है।

आप चुपचाप शांत बैठ जायें और अपनी आती-जाती श्वासों को देखते जाएँ। आप पायेंगे कि श्वास के होने में ही 'सोहम्' की ध्वनि छिपी हुई है। 'सोहम्' की ध्वनि कंठ, होंठ और मन से नहीं बोली जाती है, वह स्वतः ही प्रकट होती है।

उपनिषद् में ऋषियों ने कहा है कि इस ध्वनि को प्रकृति ने खोजा है, जो आपके श्वास से पैदा होती है। श्वास की सूक्ष्म और प्रयासरहित चोट से आपकी शक्ति अनाहत चक्र तक ऊपर की ओर उठती है, जिससे यह शरीर, मन प्रकृति के साथ जुड़ जाता है और आपको आत्म-दर्शन हो जाता है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

आप जीवन में एक मनोरंजक यात्री हैं या एक आध्यात्म-यात्री? एक मनोरंजक यात्री किसी सुंदर दृश्य या सुंदर वस्तु को देखकर कुछ समय के लिए खुश होता है, लेकिन एक आध्यात्म-यात्री सुंदर दृश्य या सुंदर वस्तु का सौंदर्य देखकर अपने मन और आत्मा को पवित्र करता है और हमेशा के लिए खुश रहता है।

एक मनोरंजक यात्री कोई भी सुंदर दृश्य देखकर पहले से तुलना करता है, लेकिन एक आध्यात्म-यात्री हमेशा अपने को वर्तमान में रखता है, इसलिए बीती हुई बातों के साथ तुलना करने का प्रश्न ही नहीं उठता है। वह सभी में एक ही को देखता है, इसलिए हर समय, हर किसी के साथ खुश रहता है। उसको सभी में सत्य दिखाई देता है - "सत्यं शिवम् सुंदरम्"। उसे वह आत्मा दिखाई देती है, जो कभी समाप्त नहीं होती। इसलिए वही शिव है, वह सत्य भी है और वह सुंदर भी है। ❤️ 🙏 🌸

जय गुरुदेव!

योग त्रिवेणी के रूप में बहता है।

पहला — ध्यान योग: बुद्धि को ठहराकर, विश्राम में उतरकर, विवेक से जीते हुए जब हम आत्मा को पहचानते हैं — तो निरंतर अभ्यास से उसका फल "प्रेम" के रूप में खिलता है। ध्यान से स्व के प्रति प्रेम बढ़ता है, और यह आदत ढलने पर हम सभी से प्रेम करने लग जाते हैं। गीता में कहा है: जहाँ बुद्धि रुकती है, वहाँ आत्मा दिखती है। दूसरा — भक्ति योग: बुद्धि को विसर्जित कर, विवेक के साथ एक तत्व में डूबते हुए जब हम भक्ति में लीन होते हैं — तो उसका परिणाम भी "प्रेम" ही है क्योंकि प्रेम की पराकाष्ठा ही भक्ति कहलाती है। भक्ति परम् प्रेम है। तीसरा — कर्म योग: फल की आशा छोड़कर, विवेक के साथ कर्म में बहते हुए जब हम कर्मयोग में प्रवेश करते हैं — तो उसका फल भी "प्रेम" ही है क्योंकि प्रयास-रहित, सहज कर्म प्रेम का ही दूसरा नाम है। गीता में कहा है: कर्म करो, फल की चिंता छोड़ो।

इस प्रकार तीनों धाराएँ चलकर प्रेम-रूपी महासागर में ही समाहित हो जाती हैं।

योग का निखरा हुआ, अंतिम रूप "प्रेम" ही है।

जय गुरुदेव!

आँखों ने रोशनी के धुँधलके में कुछ टेढ़ा-मेढ़ा पड़ा देखा और अधूरा डेटा तुरंत बुद्धि को थमा दिया। बुद्धि ने चित्त की पुरानी फाइलें खंगालीं — "पहले भी ऐसा ही देखा था, वह साँप ही था" — और फैसला सुना दिया: "निश्चित ही यह साँप है।" फैसला आते ही विचार जन्मा और चीखा: "हे भगवान! भागो यहाँ से, नहीं तो साँप काट लेगा!" इस प्रकार बुद्धि का फाइनल प्रोडक्ट तैयार हुआ — डर, घबराहट, पसीना, धड़कता दिल, भागने को आतुर शरीर।

समझने की बात यही है कि इन्द्रियों ने अधूरी खबर दी, बुद्धि ने स्मृति और संस्कार के चश्मे से उसे साँप बना दिया, और विचार ने उस भ्रम को सच मानकर पूरे शरीर-मन को युद्ध में झोंक दिया। पर यहाँ बुद्धि ने धोखा दिया, क्योंकि इसकी जाँच विवेक ने की। जैसे ही टॉर्च जली, साँप रस्सी निकला। इसलिए सूत्र बना

बुद्धि + भ्रम = नींद, अविवेक

बुद्धि + होश = विवेक।

एक अविवेकी आदमी डर के मारे भाग गया जबकि दूसरे ने जेब से मोबाइल निकाला और टॉर्च जलाकर सत्य देख लिया — उसका विवेक जाग गया।

गुरु, ज्ञान, साधना, ध्यान कोई नई चीज़ नहीं देते; बस जो सदा से तुम्हारे पास है, वही तुम्हें दिखा देते हैं। यही योग है। इसीलिए महर्षि पतंजलि कहते हैं — "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः"

योग से चित्त की "साँप" वाली वृत्ति का निरोध होते ही मनुष्य होश में आ जाता है, और देख लेता है कि वह कभी बंधा ही नहीं था।

जय गुरुदेव!

एक घोड़ा काबू किया कि तो मालिक जाग गया—एक जीतते ही सब जीत लिया जाता है। हमारा शरीर एक रथ है। इन्द्रियाँ उसके घोड़े हैं। मन लगाम है। बुद्धि सारथी है। और उस रथ की लगाम थामे हुए-आत्मा सवार है। अब राज की बात यह है कि उस रथ में पाँच घोड़े जुते हुए हैं। अगर एक घोड़ा भी पूरी तरह सारथी के काबू में आ जाए, तो बाकी चार घोड़े अपने आप लाइन में आ जाते हैं- कारण यह मन रूपी लगाम से बंधे हुए हैं। गीता कहती है: जिसकी इन्द्रियाँ वश में हैं, उसकी बुद्धि स्थिर रहती है। एक इन्द्रि की जीतते ही मन इसलिए वश में आ जाता है -क्योंकि मन का पैटर्न टूट जाता है। मन इन्द्रियों से "भोग का रस" लेता है। ज्यों ही एक इन्द्रि का रस रुकता है, मन को झटका लगता है। वो चौंककर समझ जाता है — आज मालिक जाग गया है। जैसे: जीभ का स्वाद प्रेमपूर्वक छोड़ते ही संकल्प-शक्ति बढ़ जाती है और इसकी ताकत सीधे मन को मिलती है। और तब मन खुद बोलता है — अरे! ये तो जीत सकता है। इस प्रकार पाँच इन्द्रियों में से किसी एक को भी संकल्प और प्रेम से, बिना दबाव के, जीत लेने पर मन को विश्वास और मजबूती मिलती है। धीरे-धीरे मन को आपके पास रहने की आदत पड़ जाती है। यही अभ्यास है। यही योग है। यही आत्मा तक पहुँचने का राजमार्ग है।*

इन्द्रि आपके शरीर में है, पर लगाम तो आत्मा के हाथ में है। जिस क्षण यह समझ आ जाए कि आत्मा जब चाहे लगाम रोक सकती है, उसी क्षण आत्मा पहचान जाती है कि वो सदा से परमात्मा ही थी—जैसे लहर को पता चल जाए कि "मैं समुंदर हूँ"।

जय गुरुदेव!

ज्ञानी कहता है कि मरने से पहले मर जाऊँ—मतलब यह है कि “मैं शरीर हूँ” ये भाव मर जाए तो जीवेषणा मर जाती है।

जिस क्षण जीने की इच्छा मरी —उसी क्षण शरीर की पाँचों इन्द्रियाँ अनाथ हो जाती हैं। जब इंद्रियाँ रूपी घोड़ों को घास दिखाने वाला ही मर गया, तो घोड़े कहाँ दौड़ेंगे, उनकी दौड़ खत्म हो जाती है।

भगवान् बुद्ध की यही शिक्षा थी कि “ईंधन खत्म और आग बुझ गई” जीवेषणा खत्म तो इंद्रियाँ अपने आप ठंडी हो गई। नेत्र- सुंदर देखने का भाव, कान - अच्छा सुनने का भाव, नाक - अच्छा सूँघने का भाव, जीभ- अच्छा स्वाद का भाव, स्पर्श - अच्छा छूने का भाव- जब तक इनमें भोक्ता का भाव रहता है तब तक इंद्रियाँ जीवित रहती हैं— इनमें साक्षी भाव आते ही— खाना प्रसाद बन जाता है और देखना- दर्शन बन जाता है।

एक राज की बात है कि काम - “इन्द्रियों का राजा है, पर आत्मा “काम” की भी मालिक है। जब तक ‘मैं जीऊँ’ की चाह रहती है — तब तक इंद्रियाँ रूपी पाँच घोड़े दौड़ते रहते हैं। जिस दिन जान लिया जाता है कि “मैं था ही नहीं, मैं शरीर से पृथक हूँ— उस दिन जीवेषणा मर जाती है। जीवेषणा के मरते ही काम- अनाथ हो जाता है — इन्द्रियाँ शांत- तो मन मौन हो जाता है।

मन मौन होते ही “अंतर् स्पन्दन” शुरू हो जाता है।

जय गुरुदेव!

साँस -आत्मा की उपस्थिति का प्रमाण है।

जब तक साँस है आत्म-तत्व है।

साँस के जाते ही आत्मा ने देह छोड़ दी, इसलिए ऋषियों ने कहा है कि प्राण ही आत्मा है। साँस को समझ लिया तो सब कुछ समझ लिया गया है। साँस को नहीं समझा तो ध्यान समझ नहीं आता है। साँस को नहीं समझा तो प्रेम दिखावा है। साँस को नहीं समझा तो ज्ञान निरर्थक है।

क्योंकि साँस ही वो पुल है जहाँ बुद्धि हृदय से मिलती है। ज्ञान प्रेम से मिलता है। और "मैं" का "तत्त्वमसि" से मिलना होता है।

क्योंकि जब तक साँस की लय नहीं साधी, तब तक मन की लय नहीं सधेगी।

"अंतर् स्पन्दन" का सबसे बड़ा रहस्य "प्राणायामेन युक्तेन सर्वरोगक्षयो भवेत्"

प्राण को साध लो तब सब रोग मिट जाएँगे। तन का भी, मन का भी।

जय गुरुदेव!

अँधेरे कमरे में दिया जलते ही अँधेरा मिट जाता है—पर न अँधेरा जाते हुए दिखता है, न प्रकाश आते हुए दिखता है—ठीक वैसे ही, जब आत्म-समर्पण का दिया भीतर जलता है, तो अहंकार का अँधेरा, क्षण में विलीन हो जाता है—न अहंकार टूटते हुए सुनाई देता है, न परमात्मा आते हुए दिखता है—बस आपका सत्य स्वरूप रह जाता है। वो स्वरूप जो हमेशा से था, बस धूल की परत चढ़ी थी। समर्पण की गहराई, उस परत को धोने वाला जल है। जितनी गहरी समर्पण की डुबकी, उतना निर्मल दर्पण होता है और उस दर्पण में वही दिखाई देता है जो तुम्हारा निरंजन स्वरूप है।

इस घटना में घटित हुआ कि “अँधेरा- प्रकाश का अभाव है। अहंकार-आत्मा का अभाव है। प्रकाश आता नहीं—प्रकट होता है। सूरज कहीं से आता नहीं— बादल हटते हैं तो वो दिखता है। परमात्मा कहीं से आता नहीं—अहंकार हटता है तो वो दिखता है।

अहंकार दीवार नहीं है, धूल है।

दीवार तोड़नी पड़ती है लेकिन धूल सिर्फ झाड़नी पड़ती है, और वो झाड़ू का नाम है — समर्पण है।

अहंकार के नाश होते ही स्वरूप—स्वयं प्रकाशित हो जाता है।❤❤

जय गुरुदेव!

सभी प्राणियों में एक ही ऊर्जा है, जो बुद्धि के रूप में प्रकट होती है। वही ऊर्जा है, जो सभी मनुष्यों में भूख और नींद के रूप में मौजूद है। वही ऊर्जा है जो उत्तेजना, गुस्सा या बेचैनी के रूप में भी मौजूद है।

ईश्वरीयता का यह अहसास होना कि यह सबकुछ एक ही ऊर्जा है और यही परमात्मा की अभिव्यक्ति है, इससे मन को शांति प्राप्त होती है। यही सत्य है ।

जय गुरुदेव!

एकाग्र मन से समाधि की अवस्था प्राप्त की जा सकती है। एकाग्र मन करने के उपाय हैं –

- (1) गुरु या ईश्वर के प्रति श्रद्धा, निष्ठा और विश्वास रखने से मन एकाग्र हो जाता है, जिससे समाधि की अवस्था प्राप्त होती है।
- (2) विवेक से संसार की नश्वरता, दुःख और परिवर्तनशीलता को जानकर भी समाधि की अवस्था प्राप्त की जा सकती है।
- (3) सटीक लक्ष्य के प्रति शत प्रतिशत एकाग्र होने से भी समाधि की अवस्था प्राप्त होती है। जब मन विस्तृत और विश्रान्त होता है, तो वह समाधि की अवस्था होती है। 🙏❤️❤️

जय गुरुदेव!

दिखाई देने वाले को सब देखते है परन्तु देखने वाले को कोई-कोई ही देखता है। 🧡🙏❤️

जय गुरुदेव!

प्रकृति का लक्षण विभिन्नता में एकता है। जैसे-पेड़ के पत्ते का नियम हरा होना है, लेकिन उसके फूल- लाल, पीला, नीला इसलिए होते हैं क्योंकि प्राकृतिक उत्पाद का रंग मूल से अलग होना ही प्रकृति का स्वभाव है। हम फूल-फल की सुंदरता को देखते ही वाह-वाह करते हैं-वास्तविकता के अनुसार प्रकृति की इस सुंदर व्यवस्था को बदलने का हमारा प्रयास बिल्कुल नहीं होता है।

माँ-बाप से जन्म लिया बच्चा भी इंसान होता है और यह प्रकृति की सबसे बड़ी उत्पत्ति होती है। साधारणतया हम बचपन में बच्चे को "भगवान का रूप" मानकर लाड़ प्यार करते हैं। बच्चे के समझदार होते ही हम उसे बदलने का प्रयास करते हैं कि-अब तूँ-डॉक्टर बन, वकील बन, इंजीनियर बन, कहकर उसका स्वरूप बदलने में लग जाते हैं-उसका नतीजा होता है-क्लेश, क्रोध, ईर्ष्या इत्यादि—जिस प्रकार हमने प्रकृति से उत्पन्न-फूल को फूल रहने दिया-ठीक उसी तरह इंसान के बच्चे को "वो जैसा है-वैसा स्वीकार करें—कारण बड़ों का काम ऊर्जा देना होता है- बाकी काम प्रकृति पर छोड़ देना चाहिए—समय खुद तराश देता है—पेड़ से फल की मांग मत करो- फूल से फल बनने की जिद मत करो- जैसा है वैसा खिलने दो।* यही धर्म है। यही शांति है।"यथा प्रकृति तथा विकृति"—जैसी प्रकृति, वैसी ही उसकी अभिव्यक्ति होती है।

जय गुरुदेव!

बुद्धि और ज्ञान औजार हैं।

जैसे आप चम्मच से खाना खा सकते हैं, पर सिर्फ चम्मच से आपकी भूख नहीं मिटती है। हमारे शास्त्र नक्शा हैं, मंजिल नहीं है, नक्शा पढ़कर आप समझ सकते हैं कि मंदिर कैसा दिखाई दे रहा है लेकिन दर्शन तब होंगे जब आप अंदर जाकर सिर झुकाएंगे।

आपकी पात्रता के अनुसार ईश्वर आपको स्वयं चुनता है। सूरज की रोशनी अगर गंदा शीशा पर पड़ती है तो वह आरपार नहीं जा सकती है। जब साधक का हृदय - निष्ठा, समर्पण, सरलता से साफ हो जाता है, तो कृपा खुद बहने लगती है। बौद्धिक ज्ञान से अहंकार बढ़ता कि मैं यह सब जानता हूँ और आत्मसाक्षात्कार से अहंकार गलता है।

हमारे उपनिषद् - शास्त्र पढ़ने-समझने को मना नहीं करते हैं-वे कहते हैं कि सिर्फ इतना करके रुक मत जाना—यह तो सिर्फ पहली सीढ़ी हैं अब आगे चलकर देखो—1)श्रवण-सुनो2)मनन-सोचोऔर 3)निद्धिध्यासन – आपने जो सुना है,जो आपने मनन किया है अपने जीने का तरीका बनाओ,शुद्ध आचरण करो, ध्यान करो—जब तीसरी सीढ़ी तय होगी और कृपा उतरती है। ईश्वर को "पाया" नहीं जाता है, उसके साथ हुआ जाता है।

जय गुरुदेव!

मेरा अनुभव

दिनांक:30/03/2026

चेरी काउंटी अपार्टमेंट, ग्रेटर नोएडा वेस्ट, नोएडा

“आज सुबह नियमित साधना— ध्यान के समय एक अविस्मरणीय पल में ऐसा महसूस हुआ, जैसे मैं अपने मन से सहजता के साथ सब छोड़ चुका हूँ। अब मैं अपनी साँस को कैसे छोड़ूँ। कारण कि साँस छोड़ते ही मैं नहीं रहूँगा - यानि मैं मर जाऊँगा। यह डर मुझे अपनी साँस को छोड़ने नहीं दे रहा था।

इतने में मुझे प्रकृति के साथ गुरुदेव का हल्का-सा अनुभव हुआ और एक मधुर आदेश आया कि तुझे मरना तो पड़ेगा लेकिन तू क्यों चिंता कर रहा है, मैं तेरे साथ हूँ।

तत्क्षण मैंने साँस को छोड़ दिया और मैं मर गया। एकदम से उसी समय- मैं- पेड़-पौधों, हवा, आसमान, पशु-पक्षी, कीड़े-मकौड़े, जीव-जंतु, उन सबमें जाकर मिल गया, जैसे यह सब में “मैं” ही हूँ। अब मैं सम्पूर्ण प्रकृति हो गया था- ऐसा होने पर- विराट सुख मिला कि सब जगह, सर्वत्र, मैं ही हूँ। मेरा स्वयं का कोई भी अस्तित्व नहीं है, मैं कुछ भी नहीं हूँ, और मैं ही सबकुछ हूँ – होने से परे- एक असंग शांति, शांत बहने वाली असीम शांति। मेरे साथ सच्चिदानंद ठहर गया था, सब तरफ़ आनंद ही आनंद था और कुछ भी नहीं था।”

रामप्रसाद दाधीच

जय गुरुदेव!

मेरा अनुभव

दिनांक 19 अगस्त 2026

चेरी काउंटी अपार्टमेंट, ग्रेटर नोएडा वेस्ट!

सुबह वॉक के लिए-लिफ्ट से नीचे उतरा

तब दिमाग में विचारों की तुरंत भीड़ लग लगी हुई थी।

आज सुबह उठने में लेट हो गया..ऑफिस के लिए लेट हो गया हूँ— वॉक भी पूरी नहीं कर पाऊँगा— नीचे आकर देखा तो गाड़ी का टायर भी पंचर पड़ा था— मैनटर मीटिंग में जाना जरूरी था— आदि बहुत बातों ने घेर रखा था— मन पर बोझ के 10 बोरे लद गए थे। अचानक उसी समय विवेक का जागरण हुआ और विचार आया कि — इसे छोड़ दे ...अब जो हो गया सो हो गया है....

अब मैं सजकता के साथ—धीरे से अपने मन का एक-एक बोझ का बोरा उतारता चला गया कि कोई बात नहीं... जो हो रहा है उसको करता चलूँ- और कमाल देखिए!

जैसे ही धीरे-धीरे- यह सब छोड़ा, वैसे ही पा लिया।

तभी मुझे यह अहसास हुआ कि मैं वॉक कर रहा हूँ— मेरे पैर शांति के साथ चल रहे थे। वॉक करते समय मेरी सांस भी व्यवस्थित चल रही है— यह एक वर्तमान में मेरे साथ बड़ी घटना हो रही थी— अचानक —पेड़ पहले से ज्यादा हरे लगने लग गए....

सुबह के समय पक्षियों की आवाज़ पहली बार इतनी साफ सुनाई दे रही थी—

बाहर रोड पर बस का हॉर्न भी संगीत लग रहा था।

ब्लिंकिट वाले भैया को अपने आप नमस्ते निकल गई।

किसी दूसरे की कार साफ करने वाले भैया

को नमस्ते कर बैठा था- टावर गॉर्ड को भी गुड मॉर्निंग" कर दिया था ।

ये सब "मैंने" नहीं किया। यह सब अपने आप हो रहा था—ऐसा लगा कि मन खाली हो गया है और प्रकृति की हर चीज सुंदर लगने लग गई है - एक बात बहुत राज़ब हुई कि—होंठों पर बिना वजह मुस्कान आ गई।

आज मैंने सीखा कि "शांति का प्रयास करने से कभी भी शांति मिलती नहीं है— शांति के मार्ग में अवरुद्ध विचारों को छोड़ने से—शांति अपने आप बरसती है।

अँधेरे को मिटाने का प्रयास करने से रोशनी नहीं आती है—सिर्फ़ एक दिया जलाने से अंधेरा खुद- स्वयं- चला जाता है ।

मैं खुली आंखों के साथ ध्यान में था।

मेरे गुरुदेव श्री श्री रविशंकर जी कहते हैं:

"प्रकृति के संग मुस्कुराना ही मौन है- ध्यान है। ❤️ 🙏

रामप्रसाद दाधीच

मातृ-पितृ एवं पितामह-नाना परिचयः

स्वर्गीया माताजी श्रीमती भगवती देवी दाधीच

पुत्री गौ-भक्त नानाजी स्वर्गीय श्री भँवर लाल जी सूँटवाल, ग्रामः तेहनदेसर, जिलाः चूरू, राजस्थान

पूज्य पिताजी पंडित आचार्य श्री नथमल जी शास्त्री दाधीच, "महामहोपाध्याय"

पुत्रः आत्म-योगी सिद्ध दादाजी स्वर्गीय श्री मालीराम जी दाधीच

ग्रामः भीवसर, जिलाः चूरू, राजस्थान

आपके आशीर्वाद और संस्कारों से ही यह जीवन और लेखन संभव हुआ।

आपके चरणों में सादर नमन।

पारिवारिक आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ!

यह आध्यात्मिक यात्रा अकेले की नहीं है।

धर्मपरायणा, कुशल गृहिणी धर्मपत्नी

श्रीमती शशि प्रभा दाधीच

पुत्रीः स्वर्गीय डॉ. भैरूदान जी शर्मा

ग्रामः लाडनू, जिलाः नागौर, राजस्थान

इनके मौन समर्पण के बिना यह संभव नहीं था।

पुत्री एवं दामादः श्रीमती श्रीलेखा दाधीच एवं श्रीमान् आशीष जी अग्रवाल, फरीदाबाद, हरियाणा

प्रिय नातिनः सावी यशस्वी अग्रवाल

प्रिय नातीः अम्बर अथर्व अग्रवाल

आपके विश्वास और सहयोग के लिए धन्यवाद एवं आभार!

मेरे प्यारे बच्चों की हँसी के बिना ये शब्द जन्म ही नहीं ले पाते।

यह पुस्तक आप सभी के प्रेम का ही प्रसाद है।

पुत्र वधु एवं पुत्र: श्री मती साक्षी मालानी एवं पुत्र श्री शेखर दाधीच, वर्तमान निवास:
लंदन (यू.के.)

आपके सहयोग और श्रद्धा के लिए धन्यवाद एवं आभार!

लेखक परिचय-

महर्षि दधीचि के वंश में जन्म

नाम: रामप्रसाद दाधीच

जन्म: 1964*

जन्म स्थान: ननिहाल, ग्राम-तेहनदेसर, जिला- चूरू, राजस्थान

पैतृक ग्राम: भींवसर, जिला चूरू, राजस्थान*

शिक्षा: प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा - छापर, चूरू, राजस्थान*

कर्म एवं सेवा क्षेत्र: दिल्ली NCR, नोएडा, उत्तर प्रदेश

स्थायी निवास: चेरी काउंटी अपार्टमेंट, टावर C-1, फ्लैट नं. 1404

ग्रेटर नोएडा वेस्ट, गौतम बुद्ध नगर, उ.प्र. - 201306

योग साधना गुरु दीक्षा: 2015

शिष्य: परम पूज्य गुरुदेव श्री श्री रविशंकर जी, संस्थापक, 'आर्ट ऑफ लिविंग,
बेंगलुरु

गुरु-कृपा से प्राप्त साधना को गृहस्थ जीवन में जीते हुए, यह शब्द-सेवा समर्पित
है।

मेल आईडी: rpdadhich@gmail.com

मोबाइल नंबर: +919911113724

॥ तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

कंप्यूटर सलाहकार: चि. कुलदीप दाधीच पुत्र श्री सुनील दाधीच

